भाव विज्ञान

BHĀVA VIJÑĀNA

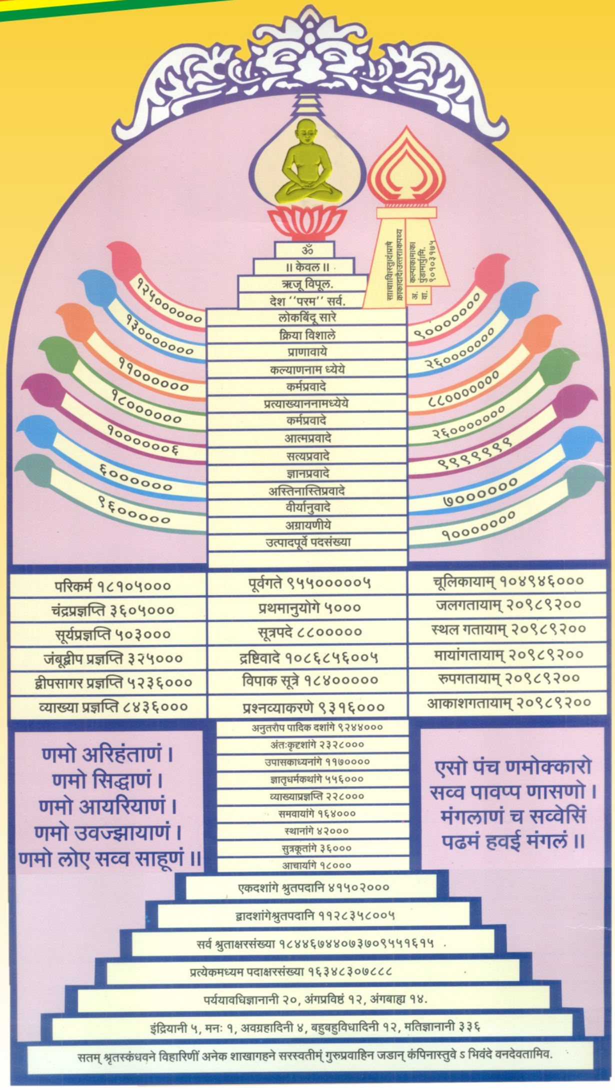

''श्रुत पंचमी महापर्व''

वीर निर्वाण संवत् - 2534
आषाढ़ कृष्ण पक्ष वि.सं. 2065 जून 2008
मूल्य : 10/-
अंक : चतुर्थ
वर्ष : प्रथम

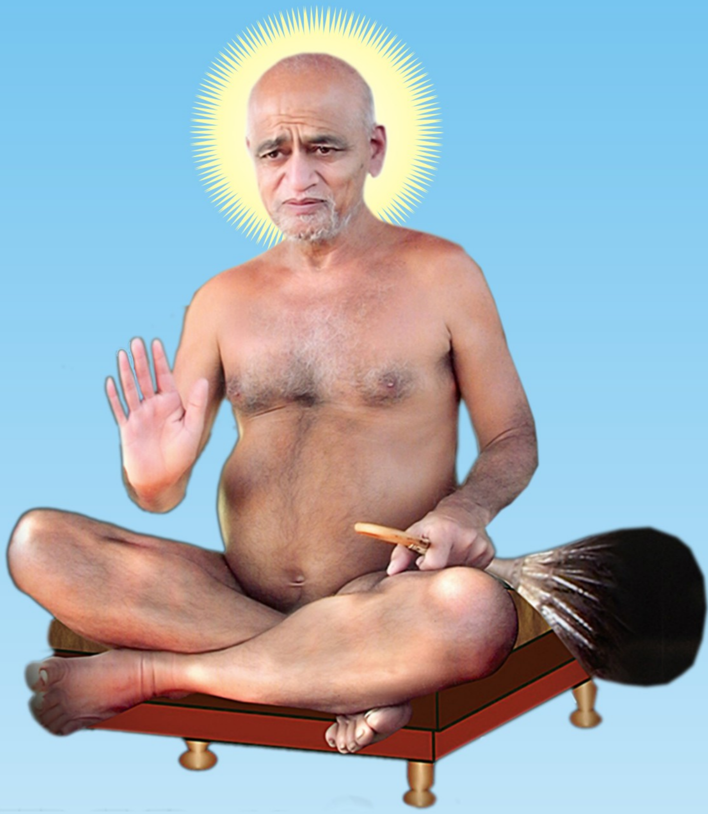

- दृश्य में सुख नहीं दृष्टा में सुख है, श्रेय की कीमत नहीं ज्ञाता की कीमत है, योग्य की नहीं योक्ता की कीमत है।
- वीतरागता आत्मा का स्वभावभूत गुण है उसके बिना हमारा कल्याण नहीं हो सकता।
- उत्तम चारित्र और समता आना ही सब शास्त्रों का सार है।
- मोह के विनाश से ज्ञान का विकास होता है और मोह के विकास से ज्ञान का विनाश।
- वैराग्य की दशा में स्वागत व आभार भी भार सा लगता है।
- व्रतरूपी वस्त्रों को साफ सुधरा करने के लिये प्रतिक्रमण का साबुन काम आता है।
- मुनि के 28 मूलगुण मुक्ति के कारण हैं और असंयमी अज्ञानी के 28 गुण (पंचइद्रिय विषय के 27 एवं 1 मन का विषय) ही संसार के कारण हैं।
- अपना उद्देश्य सिद्धि का नहीं, सिद्ध बनने का होना चाहिए।
- समय और साधना आत्मदर्शन के लिये हो प्रदर्शन के लिये नहीं।
- पुण्य के उदय में समता रखना साधक की सबसे बड़ी परीक्षा है।
- योगी बनने से मन सहयोगी बनता है तथा भोगी बनने से मन रोगी बनता है।
- व्यवहार सम्यग्दर्शन फालतू नहीं वरन् पालतू है।
- गुणों की प्राप्ति के लिये हमें गुणी व्यक्तियों के पास जाना चाहिए।

रजिस्ट्रेशन क्र. MP HIN21331/12/1/2007-TC

त्रैमासिक **भाव विज्ञान**
(BHĀVA VIJÑĀNA)

वर्ष प्रथम
अंक चतुर्थ

शुभाशीष

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी के धर्म प्रभावक परम शिष्य परम पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक		पृष्ठ
1.	सम्पादक की कलम से श्रीपाल जैन दिवा	2
2.	श्रुतपंचमी महापर्व –	3
3.	वेदना की गणितीय समतुल्यादि निश्चलताएँ एल.सी. जैन	4
4.	बड़े बाबा की याद में मुनि आर्जवसागर	12
5.	भूगर्भ से प्राप्त भगवान महावीर	15
6.	समीक्षात्मक उद्बोधन आर्जवसागर जी महाराज	16
7.	धार्मिक एवं मानवीय अनुष्ठानों की उपयोगिता ब्र. जय निशांत	25
8.	मेरा सूरज मेरा चंदा शिखर चंद पथरिया	29
8.	पाठक पत्र –	31
10.	समाचार –	35

•परामर्शदाता•
प्रोफेसर एल.सी. जैन

•सम्पादक•
श्रीपाल जैन 'दिवा'
शाकाहार सदन
एल-75, केशर कुंज,
हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)

•प्रबंध सम्पादक•
डॉ. सुधीर जैन
प्राध्यापक, शास. महारानी लक्ष्मीबाई
कन्या स्नातकोत्तर महा., भोपाल
मो. - 9425011357

•कविता संकलन•
पं. लालचंद जैन "राकेश"
गंजबासौदा

•सम्पादक मंडल•
डॉ. सी. देवकुमार, नई दिल्ली
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
अजित कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

•प्रकाशक•
श्रीमति सुषमा जैन
एमआईजी-8/4, गीतांजलि काम्प्लेक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.)
फोन : 0755–2776183

•सदस्यता शुल्क•

परम संरक्षक	11,000/-	रु.
संरक्षक	5,000/-	रु.
विशेष सदस्य	3,000/-	रु.
साधारण सदस्य	1,000/-	रु.

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ सम्पादक के पते पर भेजें।

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्पादकीय

मोक्ष का द्वार - श्रुत पंचमी पर्व

- श्रीपाल जैन 'दिवा'

ध्वनि और संकेत प्राणियों के विचार और भावों का संप्रेक्षण करते रहे हैं। मन के विचार और भावों को दूसरे तक पहुँचाने का काम आज भी इनके द्वारा हो रहा है। ध्वनि को आकार मिला तो वर्ण (अक्षर) का जन्म हुआ। वर्णो के चित्रांकन ने लिपि को जन्म दिया। वर्णो के सार्थक मेल ने शब्दों को जन्म दिया। शब्दों ने भाषा का भवन खड़ा किया।

लिपि विद्या का उल्लेख जैन धर्म में उपलब्ध है। भगवान आदिनाथ ने अपने गृहस्थ जीवन में अपनी सुपुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी को लिपि विद्या और अंक विद्या का ज्ञान दिया। लिपि विद्या का विकास इन्होंने किया। इस प्रथम लिपि को ब्रह्मी लिपि के नाम से जाना जाता है। लिपि का जन्म अर्थात ध्वनि के आकार का चित्रांकन यही चित्रांकन वर्ण (अक्षर) रूप में हमारे सामने हैं। ब्रह्मी लिपि से ही वर्तमान संस्कृत, हिन्दी, मराठी भाषा की देव नगरी लिपि निस्सृत है। पर ब्राह्मी लिपि के होते हुए किस युग में क्यो लिपि का लोप हुआ जो तीर्थकरो की वाणी (जिनवाणी) का खिरना गणधरों द्वारा वाणी को झेलना अर्थात सुनना स्मरण रखना जिसे 'श्रुत' कहा गया है लिपि रूप में लेखन नहीं हो पाया। या तो लिपि का ज्ञान हाते हुए भी लिपिबद्ध नहीं किया गया क्योंकि सुनकर याद रखनेकी क्षमता थी पर सम्पूर्ण जिनवाणी सुरक्षित नहीं रह सकी है। यह अन्वेषण का विषय है या मेरे अज्ञान का प्रत्यायन है विचारणीय है। यह क्रम भगवान आदिनाथ से लेकर अंतिम चीबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर तक चलता रहा। तीर्थंकर की वाणी किसी योग्य संयमी गणधर की उपस्थिति में खिरी, गणधर/गणधरों ने वाणी झेली/सुनी, सुनकर स्मरण रखी और अन्य भव्य मुमुक्षु श्रावकों श्रेयणों को सुनाई। यह था उन महान गणधर मुनि ऋषियों का क्षयोपशम जो उन्होंने जिनवाणी का कुछ अंश स्मृति में रखा। धीरे धीरे क्षयोपशय की शक्ति क्षीण होती गई। आचार्य धरसेन जी ने अपने वार्द्धक्य के सद्‌भाव की स्थिति में इसका अनुभव किया। उन्हें गिरनार की गुफा में चिन्तन करते हुए चिंता हुई कि जिनवाणी विस्मृति के भेंट न चढ़ जावे अत: उन्होंने 12000 मुनियों के महासम्मेलन में अपना संदेश भिजवाया कि दो योग्य मुनि शिष्यों को ज्ञान दान हेतु मेरे पास भिजवायें जिससे मैं आगम का ज्ञान उनको दे दूँ और वे उनको लिपिबद्ध कर श्रुत को सुरक्षित कर दें। उनके सन्देश की वेदना को आचार्यों ने समझा और तुरंत दो योग्य मुनि शिष्यों को उनके पास ज्ञान प्राप्त करने हेतु भेजा। दोनों शिष्यों को परीक्षोपरान्त आचार्य धरसेन ने श्रुत का ज्ञान हृदय से वात्सल्य पूर्वक दिया। दोनों शिष्य ज्ञान प्राप्त कर अंकलेश्वर नगर पहुँचे। जहाँ 12000 मुनियों के सानिध्य में पुष्पदंत और भूतबलि मुनिराजों ने 'षट्खण्डागम' नाम के सिद्धांत ग्रन्थ की रचना की। इस सिद्धांत ग्रन्थ को लिपिबद्ध किया भूतिबलि मुनिराज ने। लेखन का महान कार्य ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी के दिन समाप्त हुआ। इसी दिन षटखण्डागम महाग्रन्थ की पूजा की गई। इसीलिए इस तिथि को 'श्रुतपंचमी' के नाम से जाना जाने लगा। इसी दिन से शास्त्रों की पूजा होने लगी। शास्त्रों की सुरक्षा साल सँभाल का दिन भी माना जाता है। इसे श्रुत पंचमी पर्व के रूप में प्रति वर्ष मनाया जाता है।

आचार्य धरसेन जी के लगभग समकालीन आचार्य गुणधर जी भी श्रुत विधा में अत्यंत निष्णात साधक थे। उन्होंने भी श्रुत विनाश के भय से 'कषाय पाहुड़' महिमा नगरी में नाम के महान सिद्धांत ग्रन्थ के प्राकृत भाषा में रचना की। इस आधार से श्रुतपंचमी पर्व को प्राकृत दिवस के पर्याय रूप मनाया जाने लगा है।जो एक अच्छी शुरूआत है।

श्रुतपंमी पर्व या प्राकृत दिवस पर्व की सार्थकता तभी है जब हम जैन सिद्धांत ग्रन्थों को खोलें और नियमित स्वाध्याय करें। स्वाध्याय को परम तप कहा गया है। इसी से सम्यग्ज्ञान प्राप्त होता है जो मोक्ष का सच्चा साधन है।

श्रुतपंचमी पर्व/प्राकृत दिवस पर्व भव्य आत्माओं के लिए मोक्ष का द्वार है।

श्रुत पंचमी महापर्व

(आवरण पृष्ठ)

दिगम्बर जैन परम्परा में प्रति वर्ष ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी तिथि के दिन श्रुत पंचमी पर्व मनाया जाता है। इसी दिन आचार्य धरसेन के सुयोग्य शिष्य आचार्य पुष्पदंत एवं आचार्य भूतबलि द्वारा षट्खण्डागम शास्त्र की रचना पूर्ण हुई थी। इसी उपलक्ष्य में ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को चतुर्विध संघ द्वारा षट्खण्डागम शास्त्र की पूजा की गई। तभी से ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को संसार में श्रुत पंचमी का पर्व प्रख्यात हो गया।

भगवान ऋष्भदेव के तीर्थकाल में भगवान महावीर के तीर्थकाल तक श्रुतज्ञान की अविरल धारा चलती रही। भगवान महावीर के मोक्ष गमन करने के पश्चात् 683 वर्ष तक श्रुत की परम्परा अर्थात् ज्ञान की अविरल धारा चलती रही। इसी समय तक श्रुत को लिपिबद्ध करने का कार्य प्रारंभ नहीं हुआ था क्योंकि बुद्धि की प्रखरता के कारण शिष्य गुरु मुख से ही ग्रहण कर लेते थे। लेकिन क्षयोपशम के उत्तरोत्तर क्षीण होने के अब द्वादशांग वाणी का ज्ञाता कोई नहीं रहा। गणधराचार्य के पश्चात् अंगपूर्व के एकदेश ज्ञाता धरसेनाचार्य हुए। ये अष्टांग महानिमित्त के पारगामी और लिपिशास्त्र के ज्ञाता थे। इन्होंने अपना समय अल्प जानकर एवं अंग श्रुत के विच्छेद हो जाने के भय से शास्त्र की रक्षा हेतु महिमानगरी में आयोजित मुनियों के एक विशाल सम्मेलन में आचार्यों के पास एक पत्र भेजा। पत्र में लिखे गये धरसेनाचार्य के आदेश को स्वीकार करके महासेनाचार्य ने अपने संघ में से उज्जवल चारित्र के धारी, सेवाभावी समस्त विद्याओं के पारगामी और आज्ञाकारी दो मुनियों को धरसेनाचार्य के निकट गिरनार पर्वत की ओर भेजा। जिस दिन ये दोनों मुनिराज धरसेनाचार्य के पास पहुँचने वाले थे, उस दिन पिछली रात्रि में धरसेनाचार्य ने कुन्द पुष्प, चन्द्रमा और शंख के समान श्वेत वर्ण के धारी दो ह्रष्ट-पुष्ट बैलों को अपने चरणों में प्रणाम करते हुए देखा। ऐसे सुखद स्वप्न को देखकर आचार्यश्री को अपार हर्ष हुआ और उन्होंने कहा समस्त जीवों का कल्याण करने वाली श्रुतदेवी जिनवाणी जयवन्त हो। प्रात: दो मुनि आये और आचार्य को नमस्कार कर बड़ी विनय के साथ निवेदन किया कि आप हमें ज्ञानदान दीजिए।

आचार्य धरसेन उन्हें आशीर्वाद देकर दो-तीन दिन उन्हें अपने पास रखकर उनकी बुद्धि, शक्ति और सहनशीलता की परीक्षा लेते हैं। परीक्षा में सफल हो जाने पर श्रुतोपदेश देना प्रारंभ किया जो आषाढ़ शुक्ल एकादशी को समाप्त हुआ। गुरु धरसेन ने इन शिष्यों का नाम पुष्पदंत और भूतबलि रखा। गुरु के आदेश से ये शिष्य गिरनार से चलकर अंकलेश्वर आये और वहीं पर वर्षाकाल व्यतीत किया। दोनों मुनियों ने गुरुमुख से सुने हुए ज्ञान को लिपिबद्ध किया, जो आज हमें षट्खण्डागम के रूप में उपलब्ध है। भूतिबलि ने षट्खण्डागम की रचना ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को पूर्ण करके चतुर्विध संघ के साथ उस दिन श्रुतज्ञान की पूजा की थी जिससे वह तिथि आज भी श्रुत पंचमी अथवा ज्ञानपंचमी के नाम से जानी जाती है। उसी समय से उसी की पावन स्मृति में उसके समस्त अनुयायी आज भी श्रुत पंचमी मनाते आ रहे हैं। इस दिन दिगम्बर जैन प्रति वर्ष शास्त्रों की पूजा करते हैं, उनकी साफ-सफाई और जीर्णोद्धार करते हैं तथा नये वेष्ठनों में बाँध कर सुरक्षित करते हैं।

''जैन गजट से साभार''

वेदना की गणितीय समतुल्यादि निश्चलताएँ

प्रोफेसर एल.सी. जैन

भूमिका

यहाँ हम वेदना (Pathos) को अनुभव के अर्थ या (Feeling) के अर्थ में ग्रहण कर चलेंगे। साधारणत: वेदना साता या असाता रूप में प्रकट होती है। धवलाकार के अनुसार सभी कर्मों की वेदना होती है, वह भी साता रूप अथवा असाता रूप। इस प्रकार एक सिद्धांत यह बनता है कि कर्म अलग-अलग प्रकृति वाले होते हुए भी तत्प्रकृतिरूप साता या असाता का अनुभव कराते हैं। इसे हम वेदना का आधार लेकर एक समतुल्यता का सिद्धांत कह सकते हैं, ठीक वैसा ही जो आइंस्टाइन के गुरुत्वाकर्षण निमित्त (gravitational field) को गणितीय रूप देने में जड़ मात्रा (Inert Mass) और गुरुत्वाकर्षणीय मात्रा (gravitational mass) में समतुल्यता सिद्धांत (principle of equivalence) का आधार बनाया था। यही निश्चलता विश्व में व्यापक सापेक्षता सिद्धांत (principal of general relativity) के नाम से विख्यात हुई तथा तीन सूक्ष्म प्रयोगों द्वारा परिपुष्ट की गयी।

इसके प्राय: दस वर्ष पूर्व प्रकाशित आइन्स्टाइन के सापेक्षता के विशिष्ट सिद्धांत (special theory of Relativity) में प्रकाश की गति से निश्चलता लेकर जो निमित्त-नियम (field-laws) न्याय संगत पाये गये वे लारेञ्ज रूपान्तरणों (Lorenz transformations) के ग्रुप (समूह) को समाधानित करते थे। इसे सरलतम अभिव्यक्ति देने के लिए मिन्कोस्की ने आकाश-काल (space-time) को एक ऐसा सापेक्ष स्वरूप दिया जिसमें वेक्टर (सदिश) तथा टेन्सर की भाषा में विद्युच्चुम्बकीय निमित्त वस्तुओं को अभिव्यक्त किया जाने लगा। इसी में से $E=mc^2$ सूत्र निकाला गया जिसके आधार पर पुदग्लों की अपार शक्ति को प्राप्त किया जाने लगा।

सापेक्षता के व्यापक सिद्धांत में रूपान्तरणों का ग्रुप (समूह) एक व्यापक रूप में किया गया जिसे बिन्दु या निर्देशांक रूपान्तरणों (point or coordinates transformations) का समूह कहते हैं। निमित्त-वस्तुओं के गुरुत्वाकर्षणीय नियम इस समूह के प्रति सहचर पाये जाना आवश्यक माने गये तथा इसके लिए उपयुक्त फ्रेम (frame) रीमान की आकाश-काल सम्बन्धी ज्यामिति (geometry) पायी गई। इसमें भी वेक्टर तथा टेंसर की भाषा ने कुछ अधिक सामान्य रूप लिया।

वेदना

अब हम कर्म सिद्धान्त के वेदना प्रसंग को लेते हैं। अग्रायणीय पूर्व की पंचम वस्तु चयन लब्धि के अंतर्गत बीस प्राभृतों के चतुर्थ प्राभृत नाम ''कर्म प्रकृति'' है। इनमें कृति व वेदना आदि चौबीस अनुयोग द्वार हैं। इनमें से कृति व वेदना नामक दो अनुयोग द्वार षट्खण्डागम के ''वेदना'' नाम से प्रसिद्ध इस चतुर्थ खण्ड में वर्णित हैं। विस्तार से धवला टीका पुस्तक नौ, दश, ग्यारह और बारह में दृष्टव्य है। वेदना से सम्बंधित अन्य ग्रंथों में दी गयी सामग्री के लिए जैनेन्द्र सिद्धांत कोश, भाग-3, पृष्ठ 598 आदि दृष्टव्य हैं। वेदना निक्षेप, वेदना नय विभाषणता के पश्चात् वेदना नाम विधान में बंध, उदय व सत्व स्वरूप से जीव में स्थित कर्म रूप पौद्‌गलिक स्कन्धों में नयाश्रित प्रयोग प्ररूपणा के लिए प्रस्तुत अनुयोग द्वार की आवश्यकता बतलाई गई है। इसके अनुसार नैगम और व्यवहार नय के आश्रय से नोआगम-द्रव्य कर्मवेदना ज्ञानावरणीय आदि के भेद के आठ प्रकार की कही गयी है, कारण यह कि यथाक्रम से उनके अज्ञान, अदर्शन, सुख-दुख वेदन, मिथ्यात्व व कषाय, भवधारण,

शरीर रचना, गोत्र एवं वीर्यादि विषयक विघ्न स्वरूप आठ प्रकार के कार्य (functions) देखे जाते हैं जो अनुभावाश्रित तथ्य (empirical facts) हैं। यह वेदना विधान की प्ररूपणा हुई। नाम विधान की प्ररूपणा में ज्ञानावरणीय आदि रूप कर्म द्रव्य को ही "वेदना" कहा गया है। संग्रह नय की अपेक्षा सामान्य से आठों कर्मों को एक वेदना रूप से ग्रहण करने पर समतुल्यता का मूल सिद्धांत (principal of equivalence) समाविष्ट हो जाता है। ऋजुसूत्र नय की अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना आदि का निषेध कर एक मात्र वेदनीय कर्म को ही वेदना स्वीकार किया गया है, क्योंकि व्यवहार में (in behaviour) सुख दुख के विषय में ही वेदना शब्द प्रयुक्त होता है। शब्द नय की अपेक्षा वेदनीय कर्म द्रव्य के उदय से उत्पन्न सुख-दुख का अथवा आठ कर्मो के उदय से उत्पन्न जीव परिणाम को ही वेदना कहा गया है क्योंकि शब्द नय का विषय द्रव्य सम्भव नहीं है।

वेदना रूप द्रव्य के सम्बन्ध में उत्कृष्ट, अजघन्योत्कृष्ट तथा जघन्य आदि पदों की प्ररूपणा वेदना द्रव्य विधान है। इसमें पदमीमांसा स्वामित्व और अल्पबहुत्व नामक अनुयोगद्वार बतलाए जाते हैं। इसी प्रकार वेदना क्षेत्र, वेदना काल विधानों में पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व अनुयोग द्वारों से वर्णन मिष्ठता है। अंततः इसी प्रकार वेदना भाव विधान का भी इसी प्रकार विवरण विस्तार से है। सामान्यतः तत्त्वार्थ सूत्र में असाता एवं साता वेदनीय के आस्रव निम्नरूप में दृष्टव्य है-

दुख शोक तापाक्रन्दन वध परिदेवनान्यात्म परोमय स्थान्यसद्वेद्यस्य ॥ 6.11 ॥
भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ 6.12 ॥

वेदना द्रव्य विधान में पदमीमांसा में आठ कर्मो की द्रव्यवेदना के विषय में उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ओज, युग्म, ओम, विशिष्ट और नोओम-नोविशिष्ट इन 13 पदों द्वारा विचार किया गया है। यहाँ एक चूलिका में योग के अल्पबहुत्व, और योग के निमित्त से आने वाले कर्म प्रदेशों के भी अल्पबहुत्व की प्ररूपणा है। प्रसंगानुसार अविभागप्रतिच्छेद, वर्गणा, स्पर्धक, अन्तर, स्थान, अनन्तरोपनिधा, परम्परोपनिधा, समय, वृद्धि और अल्पबहुत्व प्ररूपणा का विस्तृत विवेचन इन 10 अनुयोग द्वारों द्वारा किया गया है। क्षपित कर्मांशिक का लक्षण भी दृष्टव्य है। इसी प्रकार का विवरण यथा प्रायोग्य विधि से क्षेत्र, काल व भाव विधानों में मिलता है।

पुस्तक 11 में तदनुसार, प्रथम चूलिका में चार अनुयोग द्वार हैं - स्थिति बंध स्थान, निषेक, आबाधा काण्डक प्ररूपणाएँ और अल्पबहुत्व। द्वितीय चूलिका में स्थिति बन्धाध्यवसाय स्थानों की प्ररूपणा में 3 अनुयोग द्वारों द्वारा जीव समुदाहार, प्रकृति समुदाहार और स्थिति समुदाहार विर्दिष्ट विवेचना है। पुस्तक 12 में प्रथम चूलिका जो वेदना भाव से संबंधित है, गुणश्रेणि निर्जरा का 11 स्थानों में विवरण दिया गया है। इसी प्रकरण में दूसरी चूलिका में अनुभागबन्धाध्यवसान स्थान का कथन बारह अनुयोग द्वारों द्वारा वर्णित है- अविभाग प्रतिच्छेद, स्थान, अन्तर, काण्डक, ओजयुग्म, षट्स्थान, अद्यस्तन स्थान, समय, वृद्धि, भवमध्य, पर्यवसाय और अल्पबहुत्व प्ररूपणाएँ हैं। इसी प्रकरण में तीसरी चूलिका में जीव समुदाहार का आठ अनुयोग द्वारों से विचार है- एक स्थान जीव प्रमाणानुगम, निरन्तर स्थान जीव प्रमाणानुगम, सान्तर स्थान जीव प्रमाणानुगम, नानाजीव प्रमाणानुगम, वृद्धि प्ररूपणा, यवमध्य प्ररूपणा, स्पर्शन प्ररूपणा और अल्पबहुत्व।

पुनः वेदना प्रत्यय विधान, वेदना स्वामित्व विधान, वेदनावेदना विधान, वेदना गति विधान, वेदना अनन्तर विधान, वेदना सान्निकर्ष विधान, वेदना परिभाषा विधान, वेदना भागाभाग विधान, वेदना अल्पबहुत्व विधान - इन शेष अनुयोगद्वारों द्वारा कुल सोलह अनुयोग द्वारों की प्ररूपणा द्वारा वेदना खण्ड समाप्त होता है।

आइन्स्टाइन का सापेक्षता सिद्धांत/अनुभववाद का मार्ग

आइन्स्टाइन की परिकल्पना में आकाश (Space) और काल (time) सापेक्ष हो जाते हैं और विशिष्ट रूप से किन्हीं भी दो क्षेत्रस्थ या गमनशील आदि अवस्थागत अवलोकन कर्ताओं द्वारा किसी भी घटना (जो क्षेत्र और काल के निर्देशांकों द्वारा प्ररूपित होती है) का गणितीय सम्बंध इस प्रकार निरूपित किया जाता है जो निश्चल हो। ऐसी दूरी का (metric) का माप दण्ड (scale) रूपान्तरणोंगत होकर भी निश्चल ही रहा आवे तो प्रकृति का नियम न्यायसंगत होता है। मात्र गति न होकर, यदि ऐसे अवलोकन कर्ताओं में त्वरण (acceleration) भी हो, तो यह निश्चलता की समस्या कुछ और जटिल हो जाती है, तथापि गुरुत्वाकर्षण के त्वरणादि से उत्पन्न सूक्ष्म शक्ति संबंधी अनेक सूत्र प्राप्त हो जाते हैं जो न्यूटन के निरपेक्ष आकाश एवं काल से उपलब्ध न हो सके थे।

आइंस्टाइन ने इस समय तक मात्र सम्मितीय ज्यामितीय वस्तुओं को ही उपयोग में लाया था तथा विद्युचुम्बकीय निमित्त को भी गणितीय सापेक्षता की परिधि में लाने के लिए, जहाँ आकर्षण और विकर्षण का समन्वय भी करने हेतु उन्होंने दूरी का (metric) के सम्मितीय (symmetic) और असम्मितीय (non-symmetic) अथवा प्रति-सम्मितीय (anti-symmetic) ज्यामितीय वस्तुओं का उपयोग किया। किन्तु वे केवल एक देश सफल हुए और अनेक समस्याएँ तद्विषयक छोड़ गये। यथा, रूपान्तरणों के समूह (group of transformations) का विस्तार, कणों के मध्य अन्तर्प्रक्रिया, नाभिकीय बलों या निमित्तों (fields) का निर्धारण आदि।

फिर भी आइंस्टाइन ने श्रृंखलावद्ध प्रक्रिया का उपयोग कर अणु की बंधी शक्ति को विमुक्त करने का अथवा स्कन्ध को विध्वंस (annihilate) कर एक नया मार्ग वैज्ञानिकों के लिये खोल दिया। हम इसी सम्बंध में वेदना द्रव्य के नाश करने, उसे नियंत्रित करने, विमुक्त करने, वेदनाभावादि के परिप्रेक्ष्य में उसका अनुसरण करेंगे। क्वाण्टम सिद्धांत भी इस मार्ग का अनुसरण अंततः करता है और कोण्डो द्वारा निर्मित नव सिद्धांत में भी एक सूत्री सिद्धांत बनाने की योजना कवागुची उच्चतर परिवर्तन क्रम वाले आकाशों (higher order spaces) के आधार पर बनी तथा फलीभूत हुई। ये तीनों सिद्धांत अत्यंत जटिल आधुनिकतम गणितों का आधार लेकर बनाये गये और नित प्रति नई नई शोधों को प्रोत्साहित करते रहे हैं, ताकि प्रकृति के गूढ़तम रूप से छिपे रहस्यों का पूर्णतः उद्घाटन हो सके। इन तीनों की विधियाँ, प्रारम्भ से ही भिन्न भिन्न हैं और उनमें आपसी तुलनात्मक अध्ययन भी विगत शताब्दी से अभी तक चलते जा रहे हैं। आइन्स्टाइन का दर्शन, क्वांटम सैद्धान्तिकों का दर्शन तथा कोण्डो का दर्शन विभिन्न पथ निर्धारण करते हुए भी अंतत उसी तत्व की खोज में लगे रहे हैं जिसका आविष्कार जैन कर्म सिद्धांत ग्रंथों में अत्यंत विलक्षण ढंग से किया गया है।

विशुद्धि

करण लब्धि में जो अधःकरण, अपूर्वकरण एवं अनिवृत्तिकरण की प्रक्रियाओं में परिणाम विशुद्धि के ऐसे गणितीय स्वरूप का विवेचन है जो कर्मो के उपशम, क्षयोपशम, क्षयादि में कार्यकारी हो जाती है। यहाँ भी विशुद्धि परिणाम का अर्थ वही है जो आत्मा के ऐसे परिणाम रूप हैं जो साता वेदनीय कर्म का बंध करते हैं। यह अर्थ जैनेन्द्र सिद्धांत कोश में विस्तार से वर्णित है। एक ओर बंध का कार्य और दूसरी ओर बंध मुक्ति का कार्य - यह विलक्षण रूप इस उत्कृष्ट विशुद्धि का चमत्कार अत्यंत रहस्यपूर्ण प्रतीत होता है। इस भारतीय परम्परागत

विज्ञान का आधुनिक भौतिक, रासायनिक, जीवादि विज्ञान के सीमांत (frontier) ज्ञान में क्या योगदान हो सकता है, अथवा उसकी गहरी भावनाओं तक पहुँच पाने आधुनिकतम विज्ञान की शोधों का पारस्परिक क्या अवदान हो सकता है? सभी सिद्धांतों में निश्चलता (invariance) का आधार लिया गया है, रूपान्तरणों के समूह के प्रति अथवा सहचलता (convariance) का आधार लेकर न्याय संगति निमित्त विधानों में लाई गयी है।

वादों की तुलना

आइस्टाइन के गणितीय परिकल्पित आकाश, काल और पुद्गल की सापेक्षतापूर्ण गणितीय संरचना कुटिल (curved) रूप धारण करती है जिसमें से यदि पुद्गल निकाल दिया जाये तो गणितीय संरचना सरल (flat) रूप धारण कर लेती है। आइस्टाइन का मार्ग सापेक्षता धारण किये हुए भी निश्चयतात्मक (deterministic) माना जाता है, जब कि क्वांटम सैद्धान्तिकों का मार्ग संभावनापूर्ण (probablistic) माना जाता है। आइस्टाइन का मार्ग अनुभववाद पर आधारित है जब कि क्वांटम सैद्धान्तिकों का मार्ग प्रयोगवाद पर आधारित है जिसे आइस्टाइन अपूर्ण प्रणाली रूप मानते हैं। आइन्स्टाइन मार्ग विश्व संरचना के वृहद्‌रूप को खोलता है जबकि क्वांटम सैद्धान्तिकों का मार्ग कण विज्ञान के रहस्यों को खोलता है। कोण्डो का मार्ग आइन्स्टाइन और क्वाटंम सैद्धान्तिकों से आगे जाकर जीव विज्ञान को भी अपने सिद्धांत में समन्वित कर लेता है। अत: कोण्डो के मार्ग का अनुसरण करने पर भौतिक, रासायनिक एवं जीवविज्ञानादि का एक सूत्री सिद्धांत तक पहुँचा जा सकता है और कर्म सिद्धांत में उसे समन्वित करना लाभदायक सिद्ध हो सकता है। इसमें भी रूपांतरणों के समूहों के प्रति विभिन्न नियमों में निश्चलता निकाली जाती है, जहाँ ज्यामिति गणित अत्यंत जटिल रूप धारण कर लेती है। जैसे कर्मवृक्ष द्वारा अनेक निरूपण कर्म प्रकृति सम्बंधी दिखाये जाते हैं, उसी प्रकार कोण्डो ने ऐसे ही रचना का आधार कवागुची वृक्ष बनाकर दर्शायी है। कोण्डो का सिद्धांत अनुभववाद एवं प्रयोगवाद, दोनों के मिले जुले वाद रूप है जहाँ निश्चलता का प्राकट्‌य जरमिलो के प्रतिबन्धों पर आधारित है और जिसका फ्रेम (frame) कवागुची की उच्चतर (परिवर्तनक्रम) के आकाश की ज्यामिति है। आइंस्टाइन ने (अरीमानीय) ज्यामिति का फ्रेम अंतत: लिया और क्वाण्टम सैद्धान्तिकों ने हिल्बर्ट स्पेस का फ्रेम लेकर शोध किया।

नया अनुष्ठान

सन् 1929 में वाइल (Weyl) ने आइंस्टाइन के एक सूत्री सिद्धांत में गुरुत्वाकर्षण एवं विद्युतचुम्बकीय निमित्तों को संयुक्त करने हेतु एक ऐसा मापदण्ड या गैज (gauge) निर्धारित किया जो कुछ वर्षो बाद मेट्रिक स्केल को गैज या फेज़ (gauge या phase) की ओर ले गया। इसका आधार लेकर क्वान्टम फील्ड सिद्धांत (Quantum field Theory) निर्माण किया गया जो आइन्स्टाइन के सिद्धांत का अनुगमन था। फेज़ या गैज को भाव कह सकते हैं तथा मेट्रिक को द्रव्य रूप मान सकते हैं। जहाँ द्रव्य के मात्रा रूप समान्तरण श्रेणि में वृद्धि हानि गुणोत्तर रूप पाई जाती है। ऐसे क्वांटम निमित्त सिद्धांत में तीन निमित्त-विद्युच्चुम्बकीय, नाभिकीय (प्रबल एवं निर्बल) को एक सूचिकृत कर अंदुस्सलाम, वाइनवर्ग और ग्लेशो ने नोबेल पुरस्कार प्राप्त किया था। यहाँ दो प्रकार का भाव होता है, वैश्वीकृत एवं स्थानीय (global and local) । इस सिद्धांत का फ्रेम फाइबर-बंडिल

ज्यामिति (fibre-bundle geometry) होता है।

वेदना गणित

वेदना कर्म प्रकृति, अन्य प्रकृतियों की भाँति ही एक ऐसे कर्म आकाश (Karma-space या functional-space) का फ्रेम ग्रहण करती है जिसका विशेष विवरण विटोवोल्टेरा (Veto-volterra) के कर्म (functional या action) सिद्धांत पर आधारित प्रतीत हुआ है। एक ही अविभागी समय जब मंदतम और तीव्रतम गति से होने वाले परमाणु विस्थापन द्वारा काल और क्षेत्र में एक नवीन प्रकार की सापेक्षता प्रकट करता है तो कर्म-आकाश (functional-space) की ज्यामिति के फ्रेम को ग्रहण करता है। कर्म शब्द के लिए फंक्शनल (functional) शब्द, तो कृति के लिये फंक्शन (function) शब्द उपयुक्त प्रतीत होते हैं। जैसे $y = \sin x$ में (sine function) का ग्राफ बनता है और $y = F\left[\overset{b}{\underset{a}{x,t}}\right]$ एक फंक्शनल F का चित्रण करता है।

रूपान्तरण करने वाली क्रियाओं करणों में जो एक समूह या ग्रुप बनता है वह गणितीय परिभाषा से निबद्ध होता है और उसे समाधानित करने वाले प्राकृतिक नियमों में किसी न किसी प्रकार की निश्चलता देखी जाती है, जो किसी न किसी प्रकार की सम्मितीयता (symmetry) लिये हुए रहती है। अनेक प्रकार की कृतियों में तथा कर्मो में यह अलग अलग प्रकार की सम्मितीयता पाई जाती हैं। प्रति सम्मितीयता (anti-symmetry) भी पाई जाती है और दोनों मिलकर असम्मितीयता लक्षण (non-symmetry) को प्रकट करते हैं। इसी का आधार उपर्युक्त सिद्धांत वादों में किया गया है। सिद्धांतग्रंथों में इस लक्षण द्वारा शोध किया जाता है।

वेदना का विशुद्धि और संक्लेश में सम्बन्ध

शुभ और अशुभ रूप दो वीथियों के बीच एक अत्यंत सकरी गली है जो या तो विशुद्धि रूप होती है या संक्लेश रूप। हम संक्लेश परिणामों में चल रहे हैं या विशुद्धि रूप परिणामों में, पहिचानना कठिन होता है। दया या क्रूरता में चल रहे हैं यह भी बोध होना कठिन है। विशुद्धि रूप परिणाम चिंतामणि रत्न के समान है, अतएव बोध ऐसा हो कि विशुद्धि का किनारा पकड़ा दे।

असाता के बन्ध योग्य परिणाम को संक्लेश कहते हैं और साता के बन्ध योग्य परिणाम को विशुद्धि कहते हैं। (धवल पुस्तक ६/१-९-७,२/१८०/६)। क्रोध, मान, माया, लोभ रूप परिणाम-विशेष को संक्लेश कहते हैं (कषाय प्रा. ४/३-२२-३०/१५/१३)। जीव के जो परिणाम बाँधे गये अनुभाग सत्कर्म के घात के कारण हैं, उन्हें विशुद्धिस्थान कहते हैं (क.पा. /५/४-२२/६१९/३८०/७)। साता, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर और आदेय आदिक परिवर्तमान शुभ प्रकृतियों के बन्ध के कारण भूत कषायस्थानों को विशुद्धि स्थान कहते हैं, और असाता, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, (दुस्वर) और अनादेय आदिक परिवर्तमान अशुभ प्रकृतियों के बन्ध के कारण भूत कषायों के उदयस्थानों को संक्लेश स्थान कहते हैं। (धवल ११/४,२,६,५१/२०८/२) धवलाकार यह भी कहते हैं कि वृद्धिमान व हीयमान स्थिति को संक्लेश व विशुद्धि कहना ठीक नहीं है। वृद्धिमान व हीयमान कषाय को भी संक्लेश विशुद्धि कहना ठीक नहीं है। (जै.सि.को. खंड-3 पृ. ५७६)।

भावविज्ञान के तृतीय अंक में करण लब्धि में विशुद्धि रूप परिणामों में उत्तरोत्तर वृद्धि का गणित स्वरूप "CYBERNETICS IN JAINA KARMA THEORY" पृ. २३-३० में प्रतिबोधित किया गया है। अध: प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण तथा अनिवृत्तिकरण की अहम् भूमिकाएँ यहाँ प्रत्यक्ष रूप सामने लाने के लिए विभिन्न की विशुद्धियों की पहिचान आवश्यक होती है जो गणितीय रूप में अंक वा अर्थसहष्टि आदि रूप से दर्शाई जाती है। पंच लब्धियों में से प्रथम चार लब्धियाँ तो भव्य या अभव्य जीव दोनों के विशुद्धि उत्तरोत्तर क्रम में बढ़ती पाई जाती है, किन्तु करण लब्धि का पुरुषार्थ केवल भव्य जीव ही कर सकते हैं। कर्म का उदय तो कर्म की परिणति है और कषाय विकल्प जीव की परिणति है, किन्तु पारस्परिक निमित्त नैमित्तिक योग व्यवस्था में जैसे कर्मानुभाग का उदय होता है वैसा प्रतिफलन जीव के उपयोग आश्रयभूत होकर आकुलतादि में प्रकट होता है। अत: करण लब्धि की विशुद्धियाँ जो न केवल साता वेदनीय कर्म के बंध में निमित्त होती हैं वरन् निम्नलिखित रूप में करणों के अन्तिम समय में उस कार्य करने में सक्षम भी सिद्ध होती है। यथा- क्षायिक सम्यक्त्व के लिये ३ करण, अनन्तानुबंधी कषाय के विसंयोजन के लिए 3 करण, चारित्रमोह के उपशम के लिए 3 करण, चारित्रमोह के क्षय के लिये 3 करण, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के लिये आदि के 2 करण, देशचारित्र के लिये आदि के 2 करण, सकल चारित्र के लिये आदि के 2 करण।

उपसंहार

करण अर्थात् परिणाम, विभिन्न प्रकार की विशुद्धि की उत्तरोत्तर विभिन्न प्रकार की वृद्धि लिए विभिन्न काल लेते हुए, ग्रुप आपरेशन करते हुए विभिन्न विभिन्न रूपान्तरणों को कर्म प्रकृत्तियों में प्रकट करते हुए पहिचान लिये जाते हैं। उनमें अलग अलग प्रकार की **निश्चलता** होती है जो विशुद्धि के उत्तरोत्तर **परिवर्तन की दर** के द्वारा पहिचानी जाती है। जब विशुद्धि के उत्तरोत्तर परिवर्तन की दर में पुन: किसी **नई दर से परिवर्तन** होता है वहाँ नवीन प्रकार की **शक्ति** लिए परिणाम प्रकट होते हैं जो नये प्रकार की निश्चलता का आधार बनते हैं। जैसे न्यूटन के दूसरे नियम में विस्थापन में परिवर्तन की दर से वेग ज्ञात होता है उसी प्रकार वेग के परिवर्तन की नई दर ऐसे त्वरण को बतलाती है जिसमें उसमें परिवर्तन लाने वाली शक्ति की पहिचान हो जाती है। यही हाल जीव के परिणामों की उत्तरोत्तर विशुद्धि रूप परिणामों की शक्ति का प्रकट होता है जो अध: प्रवृत्त करण, अपूर्णकरण और अनिवृत्ति करण की विभिन्न प्रकार की निश्चलता वा वृद्धिरूप शक्ति लिये हुए कर्म प्रकृति परिणमन में दृष्टिगत हो जाती है। षट्स्थानों में होने वाली हानिवृद्धि भी इस रहस्य का उदघाटन करती है।

इसी प्रकार सातावेदना कर्म के बंध में (जो विशुद्धि रूप में विभिन्न निश्चलता लिए परिणामों के होंगे) उसी अनुपात में संबंधित दृष्टिगत होने की संभावना व्यक्त करते प्रतीत होते हैं। इसी आधार को लेकर जीव के विकास रूप अथवा अन्यथा दशाओं का गणितीय शोधाध्ययन अपेक्षित है। जो काजुओ कोण्डो द्वारा सूचनातंत्र के या अन्यतंत्र के मोनाड्स (monads) आदि अवधारणाओं पर आधारित होकर कवागुची ज्यामिति वाले वृक्ष के रूप में जीव या पुद्‌गलों में रूपान्तरण रूप विकास या अन्यथा दशाओं का दिग्दर्शन करते हों। इसी प्रकार जैन कर्म सिद्धान्त में कर्म परमाणु किस प्रकार के रूपादिधारण करते हैं, यह कर्म वृक्ष में चित्रित है। (देखिये चित्र 1 एवं 2)

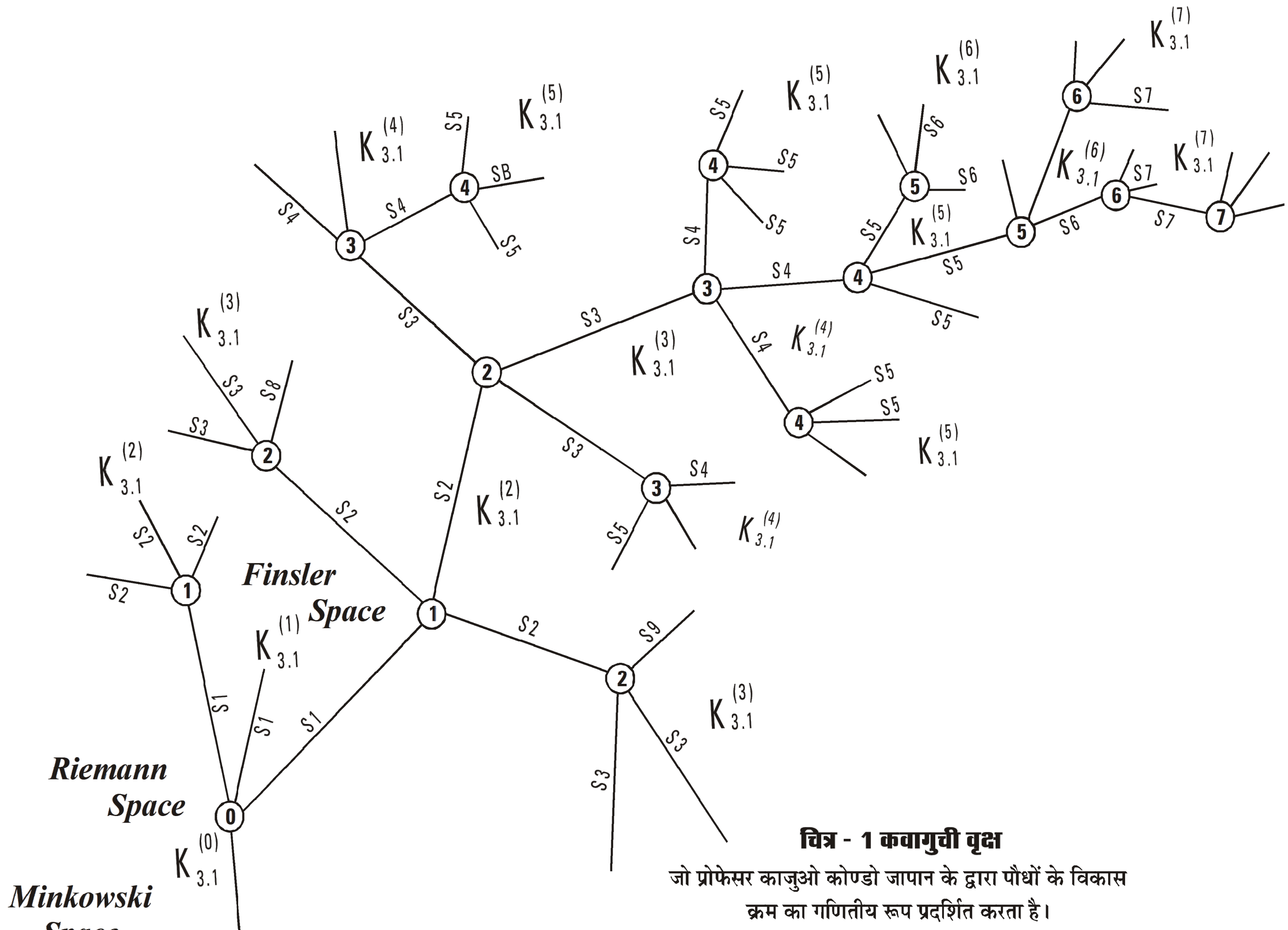

चित्र - 1 कवागुची वृक्ष

जो प्रोफेसर काज़ुओ कोण्डो जापान के द्वारा पौधों के विकास क्रम का गणितीय रूप प्रदर्शित करता है।

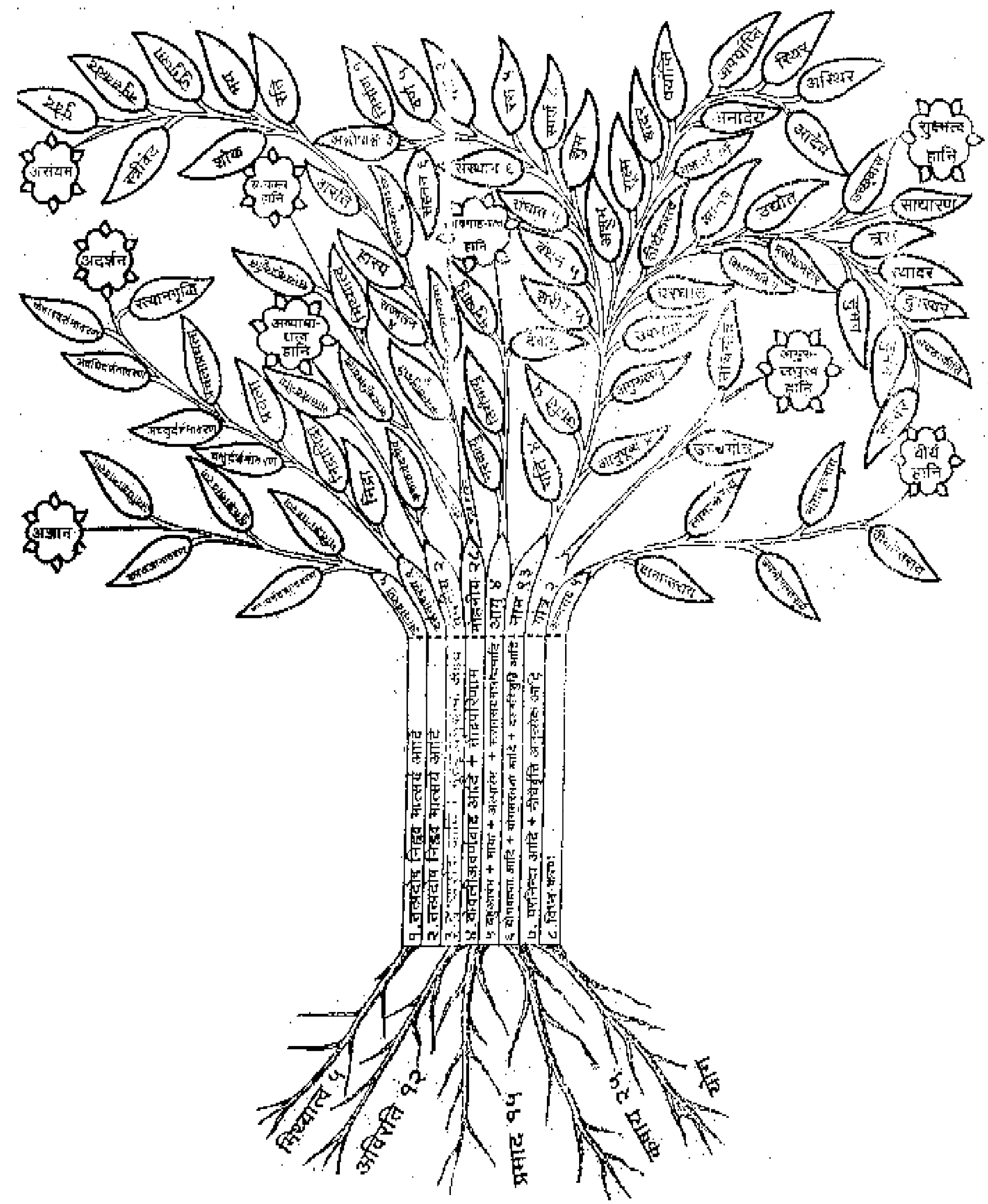

चित्र-2, मूल प्रकृति 8 उत्तर प्रकृति 148

बड़े बाबा की याद में

मुनि आर्जवसागर

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥

मैं तेरे चरणों में आकर,
नयनों को सफल बनाता हूँ।
तेरी वीतराग मुद्रा को देख,
अपने कर्म खपाता हूँ ।
मेरी सोई चेतना जग जाती है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 1 ॥

तेरी मूरत में क्या चमत्कार है?
इस धरती में क्या आकर्षण ?
आप और भक्तों का आपस में-
क्या जुड़ा हुआ है अपनापन ?
बड़ी दूर-दूर से भक्तों को
भक्ति यहाँ खेंच ले आती है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 2 ॥

हे भगवन ! अपूर्व है महिमा तेरी कि -
तेरे भक्तों के लक्ष्य यहाँ पूर्ण हो जाते हैं।
तेरी छवि निहारते ही भक्तों के,
विघ्न सभी टल जाते हैं।
तेरे चरणों में भक्ति, स्तुतियाँ,
मधुर स्वरों में गाते हैं ॥
जग के सारे स्वप्नों को भूल,
अपने आप में खो जाते हैं।
फिर आतम शक्ति जग जाती है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 3 ॥

अन्तराय हो या उपवास हो,
चाहे मन बहुत निराश हो।
न जाने शक्ति कहाँ से आती है?
कोई अद्‌भुत शक्ति ही मानो,
अपने कंधों पर ले मुझको,
पर्वत को पार कराती है।
इक नई चेतना जगाती है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 4 ॥

पर्वत पर चढ़ते ही देखो,
बने हुए चरणों को देख।
श्रीधर केवली की याद आ जाती है,
जिनका नाम लेते ही भक्तों की,
सारी थकान दूर हो जाती है।
क्योंकि उनकी चतुर्थकालीन यह,
मुक्ति सु-पद की माटी है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 5 ॥

पर्वत के ऊपर भी देखो,
गगन चुम्बी उत्तुंग शिखर हैं।
और देख लो चारों दिशि में,
बड़ा घना वृक्षों का वन है।
महा मनोरम शान्त क्षेत्र में,
निज में आत्म समाती है ॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 6 ॥

मंदिर के द्वारों पर मस्तक,
स्वयं विनत हो जाता है।
प्रभुवर के गुणगानों का स्वर,
मुक्त कण्ठ से झरता है ॥
वीतराग प्रतिमा की छवि वह,
निज स्वरूप झलकाती है॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 7 ॥

कई मुनियों ने इस पर्वत पर,
निज आतम का ध्यान किया।
सम्यक् ध्यान की ज्योति जलाकर,
उत्तम गति को प्राप्त किया॥
यह सिद्धक्षेत्र पावन भूमि,
वह पावन स्मृति लाती है॥

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 8 ॥

महान अतिशय मूरत पाकर,
ऐसी शान्त छवि को लखकर
गद्-गद् भावों से बड़े बाबा!
भावन भाता हूँ बड़े बाबा !
निश-दिन नाम जपूँ मैं तेरा,
आर्जव मय हो जीवन मेरा॥
इस महाव्रती मुनि जीवन को मैं,
आनन्द पूर्ण निभा सकूँ मैं।
तेरे चरणों में ध्यान लगाकर,
कर्मों को पूर्ण खपा सकूँ मैं॥
शीघ्र मुक्ति पद पाने हेतु,
यह कुण्डल पुर की माटी है॥
(यह कुण्डलगिरि की माटी है)

हे बड़े बाबा ! तेरी याद सदा ही आती है।
तेरी छवि मन को भाती है ॥ 9 ॥

भूगर्भ से प्राप्त भगवान महावीर की अतिशय प्रतिमा

(कव्हर पेज भावविज्ञान मार्च 2008)

भाव विज्ञान, मार्च 2008 में प्रकाशित आवरण पृष्ठ 1 - पर चित्रित हरे पाषाण में अष्ट प्रतिहार्यों से सुसज्जित ध्यान में लीन भूगर्भ से प्राप्त एक प्राचीन महावीर दिगम्बर जिन प्रतिमा का है जिस के सम्बन्ध में ज्ञातव्य है कि आचार्य विद्यासागर जी के सुशिष्य मुनि श्री आर्जवसागर जी जब ससंघ सन् 1995 के अप्रैल माह में तमिलनाडु के पोन्नूरमलै से होते हुए तच्चामबाड़ी ग्राम से तिरुमलै क्षेत्र की ओर गमन कर रहे थे तब तच्चामबाड़ी से 8-10 कि.मी. दूर स्थित एक अरुमबलौर नामक अजैनों की बस्ती में मकान बनाते समय उसकी नीव की खुदाई में किसी अजैन व्यक्ति को यह प्रतिमा उपलब्ध हुई थी और उसने रास्ते के बाजू में मकान के सामने इस प्रतिमा का रख रखाव कर रखा था उसने तच्चामवाड़ी के श्रावकों के साथ मुनि आर्जवसागर जी को ससंघ अपने गृह के सामने से विहरते देखकर मुनि श्री आर्जवसागर जी की ओर इशारा किया कि आपके मत की प्रतिमा मुझे इस नीव से प्राप्त हुई है। आप दर्शन कीजिये तब मुनिश्री ने दर्शन और कायोत्सर्ग कर कहा कि आप इस प्रतिमा का क्या करेंगे तब उस भव्य ने कहा कि आप जो कहें वही करेंगे, तब मुनिश्री ने कहा कि यह प्रतिमा मुझे दे दो। तब उस भव्य ने कहा ऐसा ही हो तब मुनि श्री ने कहा जब हम लोगों को भेजेंगे तब तुम सहर्ष सादर इस प्रतिमा को मेरे निकट भेज देना। उसने कहा स्वीकार है गुरुदेव।

इस प्रतिमा का अतिशय लोगों ने साक्षात् देखा क्योंकि जिस रास्ते से मुनि श्री जा रहे थे वह रास्ता जंगल और कांटों का था जब तच्चामवाड़ी ग्राम से चले थे तब लोगों ने कहा था कि मुनिश्री तिरुमलै क्षेत्र को जाने के लिए दो रास्ते हैं, एक पक्के रोड वाला जो देविकापुरम होकर जाता है और दूसरा कच्चा रास्ता जो जंगल में से कुछ छोटे छोटे गाँव होते हुए पहुँचता है अतः आपको निर्बाध रूप पक्के रास्ते से चलना उचित होगा। श्रावकों के आग्रह से पक्का रास्ते पर एक दो फर्लांग चलकर मुनिश्री का मन पीछे मुड़कर जंगल वाले कच्चे रास्ते पर चलने का हुआ। मुनिवर के पैर कुछ थमे और पीछे मुड़कर मुनि श्री जंगल के कच्चे रास्ते की ओर चलने का इशारा करने लगे तब लोगों ने भी हाँ में हाँ मिलाते हुए मुनि श्री के आगे पीछे चलना शुरू कर दिया। करीब 5-7 कि.मी. चलने के उपरांत अमरुमबलौर नामक ग्राम में पहुँचे और वहाँ के लोगों ने भूगर्भ से प्रतिमा निकलने की बात बतलाई। तब श्रावक लोगों को अपार खुशी हुई तथा मुनि श्री ने प्रतिमा के पास जाकर कहा कि यह अतिशय घटित होना होगा तभी मेरा मन इस मार्ग से आने का बना यह प्रतिमा बड़ी प्राचीन और अतिशयकारी है ऐसा कहते हुए मुनि श्री ने उस प्रतिमा को आचार्य कुन्द कुन्द की तपोस्थली पोन्नूरमलै पहाड़ पर जहाँ एलाचार्य के चरण चिन्ह बने हुए हैं वहाँ विराजमान कराने का मार्गदर्शन दिया। सन् 1995 के पोन्नूरमलै वर्षायोग के बीच षोड्श कारण पर्व में ऐसी अतिशयकारी प्रतिमा जी को लाया गया और प्रतिमा जी के आने से क्षेत्र की काफी उन्नति हुई तथा सारे भारत या विश्व में उसका प्रभाव फैला और जिसका लघु पंचकल्याणक एवं वेदी प्रतिष्ठा उसी वर्षायोग के सम्पूर्ण होने पर 5/11/95 को सोल्लास सैकड़ों भव्यों के बीच सम्पन्न हुई। आज भी सारे भारत के भव्यगण ऐसे क्षेत्र पर जाकर अतिशयकारी महावीर भगवान के दर्शन कर अपने आप को बड़ा सौभाग्यवान मानते हैं और मुनि श्री की असीम अनुकम्पा और प्रभावना को स्मृति में लाते रहते हैं। जिसका छाया चित्र भावविज्ञान मार्च 2008 के मुख पृष्ठ पर प्रदर्शित किया गया है।

विद्वत संगोष्ठी राँची

समीक्षात्मक उद्‌बोधन-2

मुनि श्री आर्जवसागर महाराज

गतांक से आगे ....

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया॥
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो॥

लोक सम्बंधी एक विशेष चिन्तवन को सभी जिनधर्मी पढ़ते हैं और सभी सम्प्रदाय के लिए भी अनुकरणीय और इष्ट होता है। इस जगत में हरेक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति है। जैसे कहा जाता है कि एक बीज के अन्दर वृक्ष बनने की शक्ति होती है। हरेक आत्मा परमात्मा बन सकती है लेकिन वह भव्य होना चाहिए। जैसे कि स्वर्ण पाषाण जमीन से निकलता है और उससे स्वर्ण निकलता है। एक और ऐसा भी पाषाण होता है जिसको हम अन्धपाषाण बोलते हैं। उससे स्वर्ण कदापि नहीं निकलता है। उसके अन्दर उपादान इतना सशक्त नहीं होता कि अपने अन्दर से वह शक्ति व्यक्त कर सके। कहते हैं कि मयूर के पंख में स्वर्ण होता है लेकिन उसको कोई बाहर नहीं निकाल सकता और किसी भी प्रक्रिया से वह बाहर नहीं निकाला जा सकता। ऐसे कुछ दूरानदूर भव्यजीव इस जगत में हैं वे भले ही मोक्ष पाने की शक्ति रखते हों लेकिन कभी उसका व्यक्तिकरण नहीं होता। कहीं शक्ति हो तो भी व्यक्तिकरण के लिए वैसे निमित्त चाहिए और वैसे निमित्त मिलने पर भी अगर उपादान सशक्त नहीं है तो वहाँ कार्य नहीं हो पाता।

जहाँ उपादान सशक्त होता है तो कई बार अपने आप भी निमित्त मिलने लग जाते हैं। हम इस जगत में हरेक आत्मा को परमात्मा की शक्ति से देख सकते हैं। लेकिन शक्ति से ही देख सकते हैं वहाँ व्यक्ति वर्तमान में हुई नहीं। हम बीज में वृक्ष की कल्पना कर सकते हैं। लेकिन वर्तमान में बीज को हम वृक्ष नहीं बोल सकते। हम कह सकते हैं कि शक्ति की अपेक्षा से उसमें वृक्ष और फल सब कुछ छुए हुए हैं। दुग्ध में घी की शक्ति है। वह शक्ति कब बाहर आती है? जब उसके साथ वैसे निमित्त मिलते हैं और उस प्रकार की प्रक्रिया की जाती है तब घी रूप में उसकी व्यक्ति होती है तब एक अलग ही स्वाद मिलता है। योग्यता आवश्यक होती है प्रत्येक कार्य के लिए जैसे कि आप बीज को भूमि में डालोगे तो भूमि कितनी साफ सुथरी होना चाहिए? कंकड़ पत्थर से रहित होना चाहिए। मृदु होना चाहिए और उसमें पानी डालोगे, खाद डालोगे और रक्षा करोगे तो फिर वह बीज अंकुरित होगा और धीरे-धीरे वह वृक्ष रूप लेकर के हमें फल भी देगा। इसी तरह से जैसे कि घी को भी पाने के लिए दूध को तपाना पड़ता है और नवनीत को भी तपाना पड़ता है तब वहाँ घी बनता है। घी की शक्ति युक्त दूध को पीकर घी का स्वाद नहीं ले सकते। ऐसी ही वर्तमान में हम इस आत्मा में परमात्मा की शक्ति तो बोल सकते हैं। परंतु व्यक्तिकरण नहीं हैं अतः उसका स्वादादि लेकर अनुभव हम नहीं कर सकते।

यह बात भी हमें अच्छी तरह से समझना चाहिए कि अभी हम इस संसार में रहते हैं तो इस संसार में इन

जीवों की स्थिति क्या है? जैसे जीव दो प्रकार के हैं संसारी और मुक्त। हम लोग संसारी जीव हैं। चारों गतियों में भ्रमण कर रहे हैं। नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव इन चारों गतियों में अनादि काल से भ्रमण चल रहा है। चौरासी लाख प्रकार के योनि स्थान जीवों के जन्म लेने का स्थान है इनमें जीव जन्म-मरण कर रहे हैं अनादिकाल से। 'संसरतीति संसारः' संसरतीति मतलब चतुर्गति भ्रमण; जिसका अर्थ संसार होता है। हम संसार से पार हो सकते हैं कैसे हो सकते हैं? बताइए कि बीज से वृक्ष बनता है या वृक्ष से बीज? बीज पहले है कि वृक्ष पहले है? आप बोलेंगे बीज पहले है तो बीज कहाँ से आया? वृक्ष कहाँ से आया? कौन पहले आया? कौन बाद में आया? कोई नहीं बता सकता। ऐसे ही अनादिकाल से यह आत्मा इस संसार में है, कर्मों से सहित है, कभी मुक्त थी बाद में संसारी बन गयी ऐसा नहीं है। अनादिकाल से कर्मों का संयोग लगा हुआ है। एक बात निश्चित है कि इस भव्य आत्मा को परमात्मा पद मिल सकता है जैसे हमें बीज से वृक्ष नहीं चाहिए तो क्या करना पड़ेगा? अगर हम बीज को जला देंगे तो वृक्ष नहीं बनेगा। ऐसे ही इस संसार में उत्पत्ति का कारण है कर्म। हमारी आत्मा में जो अष्ट कर्मों का बन्ध है। उसे कार्मण शरीर बोलते हैं। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गौत्र और अन्तराय इन अष्ट कर्मों के बन्ध से आत्मा अनादिकाल से इस संसार में भ्रमण कर रही है। कर्मों का बन्ध होता है। कर्मों से गति होती है। गति में शरीर मिलता है। शरीर में इन्द्रियाँ मिलती है। इन्द्रियों को विषय भोग मिलते हैं। विषय भोग में रागद्वेष होता है। राग-द्वेष से कर्म बंध होता है और कर्मों में पुनः गति ऐसे यह चक्र अनादि काल से चल रहा है। इससे निकलने का क्या उपाय है ये हमें सोचना चाहिए। कर्म रूप बीज को जिसने जला दिया तो वह इस संसार में जन्म, मरण नहीं करता। इस लोक में संसारी आत्माओं में वे भी आते हैं जो जीवन मुक्त हैं हमारे केवली भवगान आठ कर्मों में से चार घातिया कर्मों का नाश करके वे केवली भगवान बन जाते, प्रत्यक्ष ज्ञानी बन जाते हैं और समवसरण या गंधकुटी की रचना होती है। उनका इस जीवन में नियम से मोक्ष होगा। अब वे इस संसार में जन्म नहीं लेंगे इसलिए उनको जीवन मुक्त कहा जाता है और जो आठों कर्म से दूर हो जाते हैं वे कर्म मुक्त कहलाते हैं वे सिद्ध परमेष्ठी बन सिद्धालय में जाके विराजमान हो जाते हैं फिर इस संसार में नहीं आते हैं। जैसे एक बार दूध से घी बनने के बाद क्या कभी वह घी दूध बनता है? नहीं बनता। वैसे ही एक बार आत्मा मोक्ष जाने के बाद पुनः इस संसार में अवतरित नहीं होती। जब तक ये आत्मा चार गतियों में कभी नरक, कभी देव, कभी मनुष्य, कभी तिर्यञ्च ऐसी गतियों में घूमती रहती है तब तक संसार चलता रहता है और जब इन चारों गतियों से निकल जाती तो फिर पुनः इस संसार में नहीं आती।

संसार निवारण हेतु स्वस्तिक का विवेचन बड़ा मार्मिक है। एक जगह बहुत अच्छा विवेचन देखा था स्वस्तिक का। जैसे हमने 卐 बनाया तो उसमें खड़ा डण्डा जन्म का प्रतीक है। आड़ा डण्डा मरण का प्रतीक है। चारों तरफ चार डण्डे चार गतियों के प्रतीक हैं। जन्म, मरण चलता है और चारों गतियों में भ्रमण चलता रहता है। उसमें चार शून्य रखे हुये हैं उनमें तीन, चौबीस, पाँच और चार ऐसे अंक खिलते हैं ये किसके प्रतीक हैं? रत्नत्रय का पालन करना, चौबीस तीर्थंकरों को मानना, पाँच परमेष्ठियों पर श्रद्धा करना और चारण ऋद्धिधारी मुनियों का ध्यान करना। ऐसा धर्म का जो हमारे भगवान ने उपदेश दिया है उसके अनुसार चलकर जन्म, मरण के चक्कर से दूर होकर यह आत्मा कहाँ जाती है? अब अपन ने जो स्वस्तिक बनाया है उसमें चारों कोणों में थोड़ी तिरछी रेखाएँ भी बनायी हुयीं हैं। जिसका अर्थ यह होता है कि जब यह आत्मा धर्म का पालन करती है तब इस संसार से

निकल जाती है और मोक्ष को प्राप्त जाती है। अच्छा लगा न! कितना अच्छा चिंतन किया है स्वस्तिक के सम्बंध में। धन्य-धन्य वे भव्यात्म लोग जो इस संसार में रहते हुए भी ध्यान आदि के द्वारा कर्मों का क्षय कर देते हैं और यह आत्मा भव से मुक्त हो जाती है। कर्मों से मोक्ष पाने के लिए सबसे प्रमुख ध्यान है और वह ध्यान कैसे होता है? तो जब तक हमारा परवस्तु से सम्बंध रहता है तब तक एकाग्रता नहीं आती जैसे कि एक छोटी-सी वस्तु लँगोट है वह फट गयी तो सुई चाहिए, सुई को धागा चाहिए, सुई, धागा रखने के लिए डब्बी चाहिए, डब्बी के लिए पेटी चाहिए पेटी रखने के लिए घर चाहिए और घर में लगाने के लिए ताला चाहिए। ताले टूटे तो केस डालेंगे। फिर केस में लड़ने के लिए पैसे चाहिए और पैसे के लिए दुकान चाहिए सब कुछ चाहिए। इसलिए छोटे से परिग्रह से भी बहुत बड़ा परिग्रह आ जाता है और चिंताओं पर चिंताएँ बढ़ती जाती हैं। चिंताएँ बहुत रहती हैं। प्रवचन चलते हुए भी बार-बार बाहर भागना पड़ता है आपको; क्योंकि मोबाइल से सम्बंध जोड़ रखा है और अगर मोबाइल में सिम न हो या नेटवर्क से सम्बंध जुड़ा न हो तो क्या घंटी आयेगी? नहीं आयेगी, घंटी नहीं बजेगी तो आपको यहाँ-वहाँ दौड़ना नहीं पड़ेगा, दो बार लाल स्विच दबा दिया आपने तो बन्द हो गयी घंटी, अब कोई सम्बंध नहीं। सम्बंध रखते हैं तो हमें आकुलता होती है। मन वहाँ भाग जाता है। सभा में बैठे हुए भी हमारा मन दुकान तरफ चला गया। दुकान से फोन आ गया, घर से फोन आ गया तो हमारा मन भटक जाता है। हमारे भगवान ने क्या किया था? मुनि बनकर सब सम्बंध तोड़ दिया था जब सम्बंध तोड़ दिया तो मन एकाग्र हुआ। अपनी आत्मा में ही तल्लीन हो गये और कर्मों का क्षय हो गया। एक और बात आप सोचेंगें कि क्या ऐसे ही कर्मों का क्षय हो गया? देखो एक छोटा-सा उदाहरण है-

सूर्य की किरणें सब जगह पड़ रही हैं और बहुत तेज गर्मी का समय है समझो; लेकिन वे किरणें एक पेपर को भी नहीं जला पा रही हैं पेपर धूप में पड़े रहते हैं जलते नहीं और उन ही किरणों को एक लेन्स के द्वारा इकट्ठा करके एक प्वाइन्ट पर छोड़ते हैं तो पेपर जल उठता है। यहाँ पर छोटे-से उदाहरण से पूरा रहस्य खुल गया अगर हमारी ध्यान रूपी किरणें विश्व के समस्त विषयों की ओर फैल रही हैं और न जाने कहाँ-कहाँ से सम्बंध जुड़ा है। इसलिए तो हम आत्मा में एकाग्र नहीं हो पाते। जैसे लेन्स के द्वारा सारी किरणों को एक प्वाइन्ट पर छोड़ा गया वैसे ही हम अगर सभी ओर से ध्यान को हटा करके उसे एक जगह केन्द्रित करके अपनी आत्मा पर छोड़ेंगे तो कर्म रूपी पेपर जल उठेगा और आठों कर्म नष्ट होकर के आत्मा मुक्त हो जायेगी, परमात्मा बन जायेगी। बस! उसी साधना के लिए मुनि बनना पड़ता है। अब हम दूसरी तरफ से विचार करेंगे कि मुनियों ने कपड़ा क्यों छोड़ा? कपड़ा होगा तो चिंताएँ रहेंगी, धोने की, सुखाने की, प्रेस करने की, मंगाने की और पानी की भी चिंता, क्या-क्या बताएँ; इसलिए तो साधु उस परिग्रह को छोड़ देते हैं। घर, मकान भी छोड़ देते हैं और प्राकृतिक सहज जीवन जीते हैं क्योंकि ऐसा ही तो जन्म हुआ है, कोई कपड़ा तो पहनकर आया नहीं और वे एक यथाजात बालक के समान रहते हैं। उनके अन्दर कोई विकार नहीं होता क्योंकि निर्ग्रन्थ भेष विकार से रहित होता है। उनका जीवन निर्मल जीवन माना जाता है। और इससे वे कर्मों का क्षय करते हैं, पंच पाप नहीं हो पाते हैं। हिंसा से दूर हो गये, कृषि व्यापार आदि सब परिग्रहों से दूर हो गये तो हिंसा नहीं। न स्वयं अपने हाथ से भोजन बनाते हैं, और न किसी को भोजन बनाने के लिए बोलते हैं। वे तो आहार चर्या के निमित्त कोई नियम लेकर के निकलते हैं, विधि मिल गयी तो आहार हो जाता है। उन श्रावकों ने कहा कि आहार शुद्ध है तो आहार लेते हैं नहीं तो वापिस आ जाते हैं।

आपने मुझे यह नहीं दिया वह नहीं दिया, ऐसा नहीं दिया, वैसा नहीं दिया ऐसा कुछ नहीं बोलते हैं। शास्त्र पढ़ना हो तो वह उन्हें मंदिर में मिल जाता है। पिच्छिका और कमण्डल बदलना हो तो आप लोग दे ही देते हैं, उन्हें और क्या चाहिए बस सभी स्त्रियाँ तो उनके लिए माता के समान या बहिन के समान हो गयीं। जिसके लिए लोग झूठ बोलते हैं और चोरी करते हैं उस परिग्रह को तो पहले ही छोड़ दिया मात्र उपकरण हैं साथ में। पिच्छिका है, कमण्डल और शास्त्र हैं और आँखें कमजोर हो तो चश्मा है। वह भी शास्त्र पढ़ने या समिति पूर्वक चलने के लिए है इसलिए उपकरण में आ जायेगा। 'उपकारं करोतीति उपकरणं'। जो उपकार करता है वह उपकरण है। इसका मतलब यह नहीं है कि धन, पैसा भी रख लें। उसके लिए तो कितनी चिंताएँ बढ़ जाती हैं। और हिंसा का भी कोई साधन नहीं रखते हैं कि मोबाइल रख लें, मोबाइल में भी हिंसा है क्योंकि लाइट (अग्नि) का सम्बंध है अग्नि को भी जीव माना है। उसके अन्दर आपको लाइट चार्ज करनी पड़ती है। सेल है या बैट्री यह जो चीज है उसमें भी सूक्ष्मता से हिंसा है। उसके लिए कितना धन वैभव का झमेला होता है। उस मोबाइल में सिम डालना पड़ती है और क्या-क्या करना पड़ता है क्यों भैय्या? क्या कहते हैं उसको? हाँ बेलेन्स डालना पड़ता है। आप पैसे वाले हैं अतः बेलेन्स डालते रहते हैं लेकिन साधु किससे याचना करेंगे। फिर परिग्रह आ जाय और वही पैसे वाली बात भी आ जायेगी। इसलिए मोबाइल नहीं रखते। साधु के पास मोटर नहीं, गाड़ी नहीं, कुछ संसार वस्तु नहीं होती क्योंकि उससे हिंसा होती है। जब कभी गाड़ी जायेगी तो जीव जन्तुओं के ऊपर से चढ़ती जायेगी और अगर हम पैदल चलेंगे तो देखकर चलेंगे चार हाथ भूमि देखकर चलेंगे। गाड़ी चलेगी तो रफ्तार से चलेगी वह किसको देखकर चलेगी? इसलिए गाड़ी मोटर भी अपने साथ में नहीं रखते। इस प्रकार का जीवन होता है उनका और एक जगह के बन्धन में भी नहीं रहते वे। कारण कि एक जगह रहने लगेंगे तो मोह हो जायेगा। राग, द्वेष होने लगेंगे। इसलिए हमेशा विहार करते रहते हैं। बोलते हैं कि साधुओं के पैर चलते हैं और मन अपने धर्म में स्थिर रहता है, लेकिन श्रावकों के क्या होता है? पैर स्थिर रहते हैं और मन चंचल होता है। वे एक घर में बंधे रहते हैं, लेकिन मन सब जगह घूमता है। लेकिन साधुओं के पैर चलते हैं, समूचे भारत में वे विहार करते रहते हैं लेकिन मन अपनी आत्मा में स्थिर रहता है जहाँ पर भी जाय, जहाँ पर भी जहाँ पर भी है धर्म ध्यान करते हैं बस। अपने आप से मतलब है, अपने आवश्यकों से मतलब है। यही उनका जीवन है। यह तो संक्षेप से उपदेश हुआ, लेकिन अब जो यहाँ शंकाएँ उठायी गई हैं उसका भी समाधान करना आवश्यक है। भोग भूमि में जितने भी जीव हैं वे सब देव गति को प्राप्त होते हैं। ये विशेषता बहुत अच्छी विशेषता है। लेकिन वे देवगति को ही क्यों प्राप्त करते हैं? इस पर थोड़ा सा चिंतन करें। तत्त्वार्थ सूत्र के छठे अध्याय के उन्नीसवे सूत्र में कहा है कि 'निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम्' अर्थात् व्रत और शील से रहितपना देव, मनुष्य, तिर्यंच और नारक इन चारों आयु का कारण है। यहाँ एक शंका जन्म लेती है कि व्रत और शील से रहितपना देवायु के आस्रव का कारण कैसे हो सकता है? तो इसका समाधान इस प्रकार है कि भोग भूमि में कोई व्रत-शील नहीं होता तो भी वे शान्त परिणामी होते हुए देव अवस्था को ही प्राप्त होते हैं यह आगम में नियम है अतः इसी भोग भूमि की अपेक्षा से व्रत, शील से रहितपना देवायु का कारण माना है।

भोगभूमि के सम्बंध में किसी भव्य को ऐसा भी प्रश्न उठ सकता है कि भोग भूमि के जीव देवगति के अलावा अन्य गतियों में क्यों नहीं जाते? इस प्रश्न का समाधान यह है कि उन्हें पूर्व संचित विशिष्ट पुण्य का फल

ऐसा ही मिलता है। इसके अलावा जिस परिग्रह के पीछे व्यक्ति हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और मूर्छा करता ऐसा परिग्रह उन्हें दस तरह के कल्पवृक्षों से सुलभ रूप से समयानुसार प्राप्त हो जाता है जिस कारण दुःखदायी निम्न गतियों को प्राप्त कराने वाले पापों को करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। आज एक आनन्द और खुशी; मात्र हमारे लिए नहीं सबके ही मन में यह आनन्द और खुशी है कि कई दिनों की तैयारी और कई महीनों से जिसकी प्रतीक्षा थी वह कार्यक्रम आज सानन्द समापन की ओर है। विद्वत् संगोष्ठी का कार्यक्रम आज जो हम यहाँ देख रहे हैं यह कई दिनों की मेहनत की सफलता का परिणाम है और समाज को एक नई दिशा, नई दशा की ओर ले जाने वाले विद्वानों के ये आलेख-वाचन, प्रवचन रूप चिंतन बहुत ही मार्मिक रहे। हमने जितना नहीं सोचा था उससे कहीं अधिक ही हुआ। ज्ञान का जो आदान-प्रदान हुआ इससे भविष्य में बहुत कुछ लाभ होगा। सारी जनता ने लाभ लिया। यह यहाँ की समाज को तीसरा अवसर मिला है। एक तो हुआ षोडशकारण व्रत महोत्सव, दूसरा दसलक्षण पर्व में श्रावक संस्कार साधना महोत्सव जिसे आप भले ही शिविर नाम देते हैं पर हम तो दस दिनों तक प्रतिमाधारी बनने की साधना करवाते हैं। कुएँ के पानी से चौके जैसा शुद्ध आहार होता है और जिसके साथ-साथ में जप, ध्यान, पूजा, अध्ययन को करवाना मुख्य उद्देश्य रहता है। इससे श्रावक बनने की साधना और आगे साधु पद की ओर बढ़ने की भी साधना हो जाती है। इसी श्रृंखला में विद्वत् संगोष्ठी यही तीसरा अवसर है। इसमें भारत के कोने-कोने से ख्याति लब्ध विद्वान् लोग आये हैं। जितने भी विद्वान लोग आये हैं सब चरित्रवान हैं, भक्तिवान हैं। इन्होंने अपने महत्वपूर्ण आलेखों को प्रस्तुत किया है। बार-बार घड़ी की ओर देखने लग जाते हैं; क्योंकि रात्रि में भोजन नहीं करते। हमें तो भोजन की चिंता रहती नहीं है। क्योंकि साधुओं को तो प्रतिक्रमण करना होता है इसलिए हम तो अपने प्रतिक्रमण आदि के समय का याद रखते ही हैं। अपने-अपने कर्त्तव्य का ध्यान रखना ही धर्म है।

सब लोग भक्ति भावना से बहुत दूर-दूर से अपना समय निकाल कर आये हैं। कई लोग तो कॉलेज में प्रोफेसर हैं, बड़े-बड़े कार्य हाथ में लिए हुए हैं, और अनेक ग्रंथों की भी रचनाएँ करते हैं। हम लोगों ने आलेख लिखने के लिए बोला तो बिल्कुल नये आलेख और अपनी राईटिंग में लिख कर लाये हैं। उसको टाईप तक नहीं करवाया क्योंकि महाराजजी को नये पुराने का संदेह न हो जाये। लेकिन कई लोगों का आलेख हमें पुनः देखना है पढ़ना है, कई बातें जो नये विषय के रूप में हैं उसको समाज के सामने रखना आवश्यक है। बहुत जगह इसका अनुवाद भी हो सकता है। तमिलनाडु वाले चाहते ही हैं कि हमें हिन्दी की कृतियाँ मिलें जिससे हम उसको तमिल में अनुवाद कर सकें। ऐसे इस विद्वत् संगोष्ठी के कार्यक्रम से राँची नगर का नाम लोगों की दृष्टि में रहेगा। आज के दिन जो संगोष्ठी हुई है इसका नवनीत आपके सामने है। आज यहाँ पर कर्म-भूमियाँ, भोग-भूमियाँ, षट्काल परिवर्तन के सम्बंध में तीन दिन से जो विषय चल रहे हैं उसका नवनीत रूप में हमने जाना है कि कितनी कर्म भूमियाँ होती हैं, कितनी भोग भूमियाँ होती हैं, उनमें रहने वाले जीव किस प्रकार के होते हैं और वहाँ के किस प्रकार के दुःख, किस प्रकार के सुख, किस प्रकार के कर्म, किस प्रकार की वहाँ की व्यवस्थाएँ हैं, वहाँ की आयु आदिक के परिवर्तन होने, न होने के सम्बंध में, धर्म-कर्म की जो अवस्था-व्यवस्था है, साथ-साथ में ज्योतिष्क मण्डल व्यवस्था जो कि इस भूमि से 790 योजन से शुरू होकर के 110 योजन के भीतर है। वे ज्योतिष्क ग्यारह सौ इक्कीस योजन दूर से ही सुमेरू पर्वत की प्रतिक्षणा देते हैं। यह प्रदक्षिणा देने का जो कार्य है वह इस ढाई द्वीप

के अन्दर ही है। बहिरवस्थिताः बोलते हैं अर्थात् बाहर में सारे के सारे ज्योतिष्क मण्डल अवस्थित हैं। बहुत हैं बहुत बड़ी संख्या में हैं। हम एक चिंतन करते हैं इनका ढाई द्वीप के अन्दर ही भ्रमण क्यों है; इससे बाहर क्यों नहीं? जिससे हमें मालूम पड़ता है कि हमारा कितना विशेष पुण्य है, विशेष पुण्यशाली ही इस ढाई द्वीप में जन्म लेते हैं और जो मनुष्य बनते हैं वे तो और भी बड़े पुण्यशाली हैं देखो जहाँ हम सबके लिए अपने धार्मिक कर्त्तव्य पूर्ण करने के लिए निमित्त बनते हैं ये ज्योतिष्क विमान। इसलिए तो तत्त्वार्थ सूत्र में एक सूत्र हैं 'तत्कृतः काल विभागः' अर्थात् उन ज्योतिष्क विमानों के द्वारा काल का विभाग किया गया है। आप जो घड़ी, घण्टा, प्रहर बोलते हैं और इसके साथ में दिन, रात, पक्ष, अयन, वर्ष इत्यादि बोलते हैं ये सब इन सूर्य, चाँद आदि के द्वारा किये गये काल विभाग हैं। ये व्यवहार काल हैं। इस काल के द्वारा हम धर्म, कर्म की व्यवस्था में सजग होते हैं। सूर्य का उदय होता है वह हमें कर्त्तव्यशीलता सिखाता है। अपनी अनवरत गति से गतिमान हैं। हम भी गतिमान रहते हैं जीवन भर अपने कर्त्तव्य में। हमेशा सजग रहते हैं कि सुबह से उठना सिखा रहा है सूर्य, उठिये सूर्य उदय हुआ अपने कर्त्तव्यों में लग जाइये। आज का जमाना बदल रहा है। लोग सुबह उठने में आलस्य करते हैं आठ, नौ बजे तक उठते हैं और रात में बारह, एक बजे तक जगते रहते हैं। हम उनसे कहते हैं भैय्या! निशाचर जैसे कार्य करना अच्छा नहीं है; कारण कि हम जो वास्तविक प्रकाश है उसमें तो सोते हैं और जो वास्तविक प्रकाश नहीं है उसमें जगते रहते हैं। लाईट में कितनी हिंसा है, उसे बनाते समय भी हिंसा है। जब लाईट बनती है पानी से तब आप देखे तो वहाँ पंखी घूमती है कितने मेंढक, कितनी मछलियाँ मर जाती हैं ऐसे ही जलकायिक जीव भी मरते हैं, इस तरह से लाईट तैयार होती है और जब लाईट जलाते हैं तब भी कितने जीव आते हैं, पैरों के नीचे दब कर मर जाते हैं। पहले के जमाने में तो लाईट नहीं थी। अभी कुछ शताब्दियों से ही लाईट प्रचलन में आयी है। पहले क्या करते थे लोग? पहले तो रत्नों के प्रकाश में रहते थे। चन्द्रकान्तमणि, सूर्यकान्तमणि और भी कई प्रकार के साधन थे। आप जानते हैं कोहीनूर नाम का हीरा था। कितना प्रकाशित रहता था। आज नहीं है वह हमारे देश में। कहीं चला गया, इंग्लैण्ड चला गया। ऐसे रत्नों से लोगों को प्रकाश मिलता था। और ऐसा रत्न किसके पास रहता था बड़े-बड़े सम्पन्न लोगों के पास रहता था। बाकी लोगों के पास तो नहीं था तो वे क्या करते होंगे? दीपक से काम चलाते होंगे और वे लोग दिन में ही सब काम कर लेते थे मतलब रात्रि होने के पहले ही सब काम करके रात्रि होने के बाद विश्राम करना ही प्रमुख रहता था। थोड़ा बहुत धर्म ध्यान करके सामायिक, ध्यान, स्तोत्रों का पाठ, जाप वगैरह करके 9, 10 बजे आराम करते थे और सुबह 4 बजे उठ जाते थे। 6 घण्टे की निद्रा पर्याप्त है। विज्ञान के अनुसार भी 6 घंटे की निद्रा पर्याप्त है 6 घण्टे से ज्यादा कोई आवश्यक नहीं है; नहीं तो अपना आवश्यक समय ही चला जाता है। बच्चों के लिए ज्यादा से ज्यादा 8 घंटे, आपके लिए 6 घण्टे निद्रा बहुत होती है। आप दस बजे सो जायेंगे तो नियम से 4 बजे नींद खुल जायेगी, आप जबरदस्ती ओढ़कर फिर सो जोओगे तो यह प्रमाद है। काम-धाम नहीं तो सोओगे ही; लेकिन नींद जब खुल जाती है तो ध्यानादि कर सकते हैं इस प्रकार का सिस्टम बनना चाहिए। आजकल तो बहुत देर तक जगते हैं और बहुत देर तक सोते हैं। अपने सिस्टम को हमने बिगाड़ लिया है। सूर्य, चाँद हमें दिनचर्या सिखाते हैं। हमारे उपकार के लिए निकलते हैं। पाँच मेरू द्वीपों में सूर्य, चाँद की प्रदक्षिणा से दिन-रात का विभाग होता है। हम लोग इसमें संयम पालन करते हैं। सूर्य किरणें अपना प्रभाव डालती हैं जिस वजह से कुछ सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति नहीं होती है। रात्रि में भोजन करने वालों को बहुत चिंतनीय विषय

है कितना साइन्टिफिक है हमारा जैन धर्म, इसे हम जाने अतः आज के लोगों को एवं विज्ञान पढ़ने वालों के लिए ऐसे प्रवचनों की नितांत आवश्यकता है जिस मार्ग से उनको शीघ्र हम मोड़ सकते हैं धर्म की ओर।

बड़े-बड़े लोग शास्त्र ज्ञान के अभाव में ये भोग भूमियाँ, कर्म भूमियाँ क्या हैं नहीं जानते इनका वर्णन भी आज के लोगों के बीच में लुप्त जैसा हो गया। कहो तो हँसी आती है लोगों को; अभी ये तीन दिन की संगोष्ठी में लोगों को बहुत कुछ नया विषय मिला। मैंने तो एक दो महीने के पहले से ही यह भूमिका बनायी थी कि पंडितजी लोग भी आयेंगे। उनके मुख से भी आप सुनेंगे कितना महान है जैन धर्म। बहुत आस्था के साथ कर्म भूमि, भोग भूमि का वर्णन आप सभी ने सुना, षट्काल परिवर्तन सुना, ज्योतिष्क विमान के सम्बंध में सुना और उनके द्वारा काल का विभाग होता है ये भी हमने समझा। इसके साथ में हमें यह भी कहना है कि यह ज्योतिष्क मण्डल मध्यलोक मे ही है, ये नीचे दिखते जरूर नहीं है लेकिन हमारा मध्यलोक एक लाख चालीस योजन का होने से (अर्थात् मध्य लोक में जो 1 लाख 40 योजन का जो सुमेरु पर्वत है) पूरा वहाँ तक मध्यलोक चलता है और ये ज्योतिष्क विमान तो इस मध्यलोक के ऊपर 1 हजार योजन के अन्दर ही हैं। अतः वे मध्यलोक में ही है और ये जो देव विमान हैं सो ज्योतिष्क कहलाते हुये भवनत्रिक में आते हैं। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क इन तीनों को भवनत्रिक कहते हैं। इनमें मिथ्यात्व के साथ जन्म लेते हैं देव लोग, कोई भी सम्यग्दृष्टि जीव भवनत्रिक में जन्म नहीं लेता है। हाँ, जन्म लेने के बाद सम्यग्दृष्टि बन सकते हैं वे। लेकिन सभी बन जायें ऐसा नियम नहीं है। वहाँ पर अनेक अकृत्रिम जिनालय भी हैं। अधोलोक में भी ऐसे जिनालय हैं जहाँ भवनवासी रहते हैं और यहाँ मध्यलोक जैसे ही वे अकृत्रिम जिनालय हैं। जिनालायों में सब जगह जो जिन प्रतिमाएँ हैं उनकी पूजा विमानवासी देवगण भी किया करते हैं। जो मिथ्यादृष्टि देव हैं वे कुल देवता समझकर पूजा करते हैं और सम्यग्दृष्टि बहुत भक्ति भाव से निःकांक्षित भावना से पूजा करते हैं इस प्रकार का अन्तर है।

हमें विशेष और समझना है कि आज जो ग्रहों के बारे में हमने बहुत कुछ सुना है कि विज्ञान क्या कहता है, और जैन धर्म में या जैन दर्शन में क्या है, कहाँ कौन-से ग्रह हैं, कितनी दूरी पर हैं, कौन घूमता है, कौन स्थिर रहता है ये सब बातें हमने जान ली हैं। आज विशेष विषय दिया गया था नवग्रह के बारे में। चिंतन करें कि जिनका विषय था उन्होंने यह कहा कि 'भय का भूत' है आज वास्तव में यही हुआ है आज के मानव को। भय का भूत हो गया है लोगों को। लोगों को भूत सा लग गया है क्योंकि नवग्रह के चक्कर में वे जाते हैं, हाथ दिखाते हैं, अनेक प्रकार के रत्न, मालायें पहनते रहते हैं। मुझे समझ में नहीं आता, हमारे यहाँ जो कर्म सिद्धान्त है हम उसको क्यों भूल गये हैं। नवग्रह से भी बड़े-बड़े देव हैं ऊपर; जिनका प्रभाव सबसे ज्यादा है। कहा गया है कि उनके पास शापानुग्रह शक्ति सबसे ज्यादा पायी जाती है। आप पढ़ते ही हैं तत्त्वार्थ सूत्र ग्रन्थ में आया है कि ऊपर-ऊपर के देवों में क्या-क्या विशेषताएँ हैं? ऊपर-ऊपर उनकी प्रभाव शक्ति, शरीर में कान्ति, आभरणों की कान्ति, अवधिज्ञान का विषय इत्यादि ज्यादा-ज्यादा हैं। ऊपर ज्यादा-ज्यादा है तो भी उनको महत्व न देकर इन नवग्रहों को महत्व ज्यादा क्यों दे रहे हैं? ये सुमेरु पर्वत की परिक्रमा लगाते हैं और अपना सौभाग्य समझते हैं क्योकि वहाँ पर जिनालय हैं, उनमें 500-500 धनुष की ऊँची जिन प्रतिमाएँ हैं उनकी परिक्रमा लगाकर देवगण अपना सौभाग्य समझते हैं। लेकिन मूढ़ लोग उन देवों की परिक्रमा लगाते हैं। अरे! अनादि काल से यह आत्मा मिथ्यात्व भी करती रही है तो सम्यक्त्व भी अनादि काल से चल रहा है। अतः सम्यक्त्वी बनें, लोगों को जिसका अभी तक

ज्ञान नहीं था इसलिए उससे दूर रहे अब तक। लेकिन अभी सुधर सकते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जिनके अन्दर वह अज्ञानता अभी भी है। वे देव तो मेरु के चक्कर लगा रहे हैं या भगवान की परिक्रमा दे रहे हैं और कुछ लोग उनकी परिक्रमा लगा रहे हैं। इसके बारे में मुझे एक प्रश्न करना है कि नवग्रह को सबने जाना कितने सारे ग्रह हैं कितने नक्षत्र हैं यहाँ पर सब कुछ बताया था आज दिगम्बर जैन धर्म में एक अज्ञान और आ गया है कि जगह-जगह नवग्रह विधान होने लगे हैं यह नवग्रह विधान क्या किसी आचार्य ने लिखा है? लगता है किसी पंडितजी का लिखा है या दक्षिण के कोई पंडितजी हुये या भट्टारकों की परम्परा बीच में आयी है तो उन्हीं के निर्देशन में कुछ लिखे गये विधान हो सकते हैं। विधान का अर्थ पूजा होती है। मतलब यह नवग्रह की पूजा हो गई और उनमें तीर्थंकरों को निश्चित किया गया है, नौ तीर्थंकर निश्चित कर दिये हैं कोई बोलते हैं चौबीस, आज कई जगह जहाँ नवग्रह मंदिर बनाये वहाँ की बात कह रहा हूँ कि हमने देखा नवग्रह मंदिर बनाये उसमें नौ ही तीर्थंकर रखे। एक-एक ग्रह पर एक-एक तीर्थंकर निश्चित कर दिये। एक प्रश्न है मेरा जिसका जवाब आप सबको देना है कि चौबीस तीर्थंकरों में कोई भी तीर्थंकर ऐसे नहीं है जिनमें से किसी में शक्ति ज्यादा हो और किसी में कम हो लेकिन नवग्रहों में नौ ही तीर्थंकरों को क्यों लिया, बाकी को क्यों छोड़ दिया? नव ही तीर्थंकरों की कल्पना उनके विमानों में करना गलत बात है। नौ तीर्थंकरों को ले लिया और बाकी को छोड़ दिया तो जब यह वर्तमान चौबीसी हुई ही नहीं थी तब कौन से तीर्थंकर थे वहाँ? तो यह अनादि काल की व्यवस्था नहीं रही। यह तो इसी काल की कल्पना है। तमिलनाडु में मैंने देखा, मैं सात वर्ष वहाँ पर रहा था, जहाँ जिनमंदिरों के अलावा मात्र एक जगह ही नवग्रह मंदिर था। नवग्रह की मूर्तियाँ थी उसके ऊपर एक-एक करके नौ तीर्थंकर भगवानों की आकृतियाँ बनी थी। इसके बाद धीरे-धीरे हिन्दुओं जैसा प्रचलन हुआ और कई गाँव में कई जगह जहाँ मेरा विहार नहीं होता था या जहाँ मैं नहीं गया था वहाँ पर भट्टारकों के मार्गदर्शन में नवग्रह मंदिर बनाये गये नया प्रचलन चल पड़ा है। जिसका मैंने खण्डन भी किया था और कहा था कि नवग्रह की जगह आप नवदेवता रखो। एक जगह तो नवदेवता की प्रतिमा की प्रतिष्ठा भी करवाई थी। समाज वालों को भी बहुत भक्ति थी इसलिए वहाँ पर नवग्रह के जगह पर नवदेवता बिम्ब रखा गया। नवदेवता रखेंगे तो हम भी परिक्रमा लगायेंगे अन्यथा हम वहाँ जायेंगे भी नहीं और आप लोगों को महा मिथ्यात्व का दोष लगेगा ऐसा समझाया था। अभी उत्तर भारत में जो प्रचलन चल रहा है उसकी क्या आवश्यकता है? आप चौबीसी बना सकते हैं, नवदेवता मंदिर बना सकते हैं जिसमें पंच परमेष्ठी और जिन धर्म, जिन श्रुत, जिन चैत्य और जिन चौत्यालय इस प्रकार नवदेवता की पूजा कर सकते हैं। अन्यथा सरागता में क्या रखा है? कुछ भी नहीं।

किसी किसी जगह हम देखते हैं कि समवशरण की रचना में बड़ी कमी रहती है जैसे शिखरजी में एक समवशरण बना है जो बहुत पहले से बना हुआ है, गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी जब आये थे तब भी था। हमने कुछ गल्तियाँ देखीं जो आगम से बड़ी भूल मानी जायेगी वह क्या है कि बारह सभाओं की चार सभाओं में ही देवियाँ बैठती हैं लेकिन उन्होंने क्या किया है कि भगवान के नीचे जो कटनी रहती है उसमें देवियाँ बिठायी हैं, यक्ष, यक्षणी बिठा रखी हैं बल्कि वे तो जब भगवान की दिव्यध्वनि सुनती हैं तो भगवान के तरफ मुख करके बैठती हैं और सभाओं में बैठती हैं। यक्ष देव चँवर ढोरते हैं चँवर ढोरने वाले यक्ष दिखते नहीं हैं केवल चँवर मात्र

दृष्टिगोचर होते हैं ऐसा आगम है और कोई देव धर्मचक्र लेकर भी खड़े रहते हैं। लेकिन कटनी में सभा के लोगों की तरफ मुख करके कोई देव, देवता नहीं रहते हैं सम्मेद शिखर के समवशरण को देखकर के हम ऐसा सबक न लें कि हमें भी ऐसा ही समवसरण का रूप बनाना चाहिए। इसलिए आज यह कहना जरूरी था और साथ में ये नवग्रह मंदिर बनना भी आगम नहीं है, और नवग्रह विधान भी आगमिक नहीं लगता। आप नवदेवता विधान करिए या शान्ति विधान करिए। शान्ति विधान इतना श्रेष्ठ है कि इसमें सम्पूर्ण तीन लोक के देवताओं को, चारों निकाय के देवों को बुलाते हैं कि आप भी आइये और हमारे साथ पूजा रचाइये। ऐसे वर्णन सहित बहुत अच्छा विधान है। उस नवग्रह विधान की जगह पर आप यह शान्ति विधान करेंगे तो सारे देव आप से खुश हो जायेंगे। नहीं तो नवग्रह मात्र ही आयेंगे और कौन आयेंगे? सौधर्म इन्द्र वगैरह देव आपसे नाराज भी हो सकते हैं। वे कहेंगे कि मैं भवनत्रिक से ऊपर बैठा हूँ उनका दादा या राजा कहिये और तुम लोग मुझे याद नहीं करते और तुम तो हमारे नौकर-चाकर को याद करते हो, मैं ही तो उनको कहता हूँ कि पानी वर्षा करो, हवा बहाओ और चाँवर ढोरो, यह करो, वह करो, और वे मेरे अनुसार कार्य करते रहते हैं ऐसे नौकर-चाकर सदृश देवों को तुम मनुष्य लोग याद करते हो। और मेरे जैसे सौधर्म इन्द्रादि को क्यों छोड़ दिया है। हमने तो तीर्थंकरों के पंच कल्याणक किये, जीवन भर सेवा की फिर भी मुझे क्यों छोड़ दिया और मेरे नौकर-चाकरों को याद करके पूजा में लगे हो ऐसी योग्यता का विचार न करना भी मित्थ्यात्व है। यह बिल्कुल गलत है। अतः आज सम्यग्दर्शन को धारण कर उसके प्रचार प्रसार की भी बड़ी आवश्यकता है।

इत्यलं

''महावीर भगवान की जय''

आत्मा का स्वरूप

बाष्कलि मुनि ने बाहब से आत्मा का स्वरूप पूछा। बाहव ने कहा, ''ब्रह्म का स्वरूप सुनो''। यह कहकर बाहव मौन हो गए। बाष्कलि ने कहा, ''भगवन् ! आप मौन क्यों हैं ? आत्मा का स्वरूप बताइये न?'' बाहव फिर भी मौन रहे। बाष्कलि ने फिर कहा, ''भगवन् आप ब्रह्म का स्वरूप क्यों नहीं बतलाते?'' बाहव बोले, ''मैं तो ब्रह्म का स्वरूप बतला रहा हूँ, किन्तु तू नहीं समझता। यह आत्मा उपशान्त है।''

डॉ. दयानन्द भार्गव

साभार- ''शान्ति पथ प्रदर्शन''

(अहमदाबाद)

धार्मिक एवं मानवीय अनुष्ठानों पर द्रव्य, क्षेत्र काल एवं भाव का प्रभाव

ब्र. जय 'निशांत'

गतांक से आगे ....

धार्मिक एवं मानवीय अनुष्ठानों की उपयोगिता

धार्मिक अनुष्ठान मन, वचन एवं काय की शुद्धि के साथ प्रशस्त स्थान, शुभ बेला, मांगलिक द्रव्यों के द्वारा उत्साह एवं उल्लास पूर्वक सम्पादित करने से ही उद्देश्य की पूर्णता होती है। काय शुद्धि के लिए जल पुष्प एवं मंत्रों की क्रिया करते हैं। वचन की शुद्धि करने के लिए शुद्धोच्चारण, स्तुति एवं स्तोत्र का पाठ तथा मन को शुद्ध करने के लिए स्वाध्याय तथा मंत्र आराधन विधि पूर्वक सम्पन्न करना आवश्यक है। समस्त अनुष्ठान विधि सम्यक् चर्या श्रद्धान एवं संयम साधना पर टिकी होती है।

जिसके मुख्य बिन्दु निम्न हैं :-

- अभक्ष्य एवं रात्रि भोजन का त्याग।
- हिंसक पदार्थों का पूर्णतः त्याग।
- शुद्धभोजन पूर्वक एकासन।
- ब्रह्मचर्य का पालन।
- कषाय का बुद्धिपूर्वक त्याग करने का अभ्यास।

श्रावक की क्रिया वीतरागता की ओर ले जाने वाली होती है, सम्यक् अनुष्ठान करने का सौभाग्य हमें पुण्योदय से ही प्राप्त होता है। सराग आराधना स्थल में धार्मिक अनुष्ठान सम्पन्न नहीं होता है। अनुष्ठान जिनालय में सम्यक् विधि से प्रासुक जल तथा प्रक्षालित पूजा द्रव्य से शास्त्रोक्त विधि से करना चाहिए। पूजक वस्त्र, आभूषण, जिनवेदी, जिनबिम्ब, जिनवाणी सभी की शुद्धि अनिवार्य है। पूर्वकर्मानुसार जीव शुभाशुभ क्षेत्र में जन्म लेता है। नरक में उदय में आने वाली प्रकृति नरक में ही उदय में आती है तथा देवगति में उदय आने वाली प्रकृति देवपर्याय में ही उदय में आएगी अन्यथा वह सत्ता में पड़ी रहेगी। बिल्ली में चूहों के प्रति क्रूरता, शेरों में हिंसक भाव स्वभाव से रहता है परन्तु स्वयं के शावक के सामने आते ही वह ममता में परिणत हो जाता है।

जीव चेतना तत्त्व है, वह जिसे जिस रूप में देखता है स्मृति पटल पर अंकित हो जाता है।

यही संस्कार या वासना है जो निमित्त पाते ही उद्दीप्त हो जाती है, कर्म आकर्षित होकर आत्मा से संलग्न हो जाते हैं, भावना अनुसार उनमें फल देने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। विज्ञान के अनुसार प्राणी जैसा भाव करता है वैसा रसायन शरीर में निर्मित होता है, तद्रूप अभिव्यक्ति होती है।

मानसिक विकृति से ही अनेक प्रकार के रोग प्रकट होते हैं-वात, पित्त एवं कफ की विकृति, शारीरिक कमजोरी एवं मानसिक अशांति में यह रोग तेजी से प्रभाव डालते हैं।

विकृति की अभिव्यक्ति के केन्द्र मस्तिष्क एवं शरीर में हैं, यदि केन्द्रों को नष्ट कर दिया जाए तो वह

विकृति शांत हो जाती है, जैसे आँखों की बीमारी विटामिन ए से, त्वचा की बीमारी विटामिन डी से, नजला की बीमारी गोली लेने से शांत हो जाती है। अर्थात् विकृति उत्पन्न करने वाले केन्द्र से होने वाले रिसाव को बंद कर दिया जाता है, जिससे विकृति करने वाला रस समाप्त हो जाता है। साधक इस रिसाव को साधना द्वारा बंद करता है। विवेक एवं संयम पूर्वक मंत्र साधना से विष निर्विष होना, कुष्ट रोग दूर होना, धूल या पाषाण से स्वर्ण का होना आदि उदाहरण हमारे सामने हैं। यथा क्रोध का एक केन्द्र है उससे क्रोध कर्म के रस का स्राव होता है, उस बिन्दु को मिटाते ही क्रोध समाप्त हो जाता है। मादक द्रव्यों के पीने की आदत का एक केन्द्र है उसे निष्क्रिय करते ही शराब पीने की आदत छूट जाती है। औषधीय रसायनों के प्रभाव से कर्म के विपाक को बदलने में सहायता मिलती है। जैसे मंद बुद्धि के प्रभाव को कम करने के लिए ब्राह्मी आदि बूटियों का सेवन, गर्मी की तीव्र वेदना को शीतल पेय पदार्थों के सेवन से शांत करने में सहायता मिलती है। इससे सभी के रोग दूर हों, यह आवश्यक नहीं है, क्योंकि सभी रोगी डॉक्टर के द्वारा दी गई औषधि से निरोगता को प्राप्त नहीं होते हैं। पूर्वकर्मानुसार उन्हें लाभ मिलता है। सभी साधक साधना से विकृति को दूर करने में सक्षम नहीं होते हैं। प्राणी अपने कर्त्तव्य में स्वतंत्र हैं, किन्तु फल भोगने में कथंचित् परतंत्र हैं। रोग का होना मात्र कर्माश्रित ही नहीं है परन्तु वह भोजन असाता के विपाक का कारण बन जाता है। असाता कर्म का उदय जीव को प्रतिकूल संवेदन करायेगा परन्तु संवेदन किस रूप में होगा यह निमित्तों पर आश्रित है। शीत की असाता वाला व्यक्ति यदि उष्ण क्षेत्र में चला जाए तो वेदना कम होगी। इसी प्रकार उष्ण की वेदना वाला व्यक्ति यदि शीत क्षेत्र में चला जाए तो वेदना की तीव्रता उतनी नहीं होगी।

एक पिता की मृत्यु पर 4 बेटों पर समान असाता का उदय आया। छोटा बेटा सुनते ही बेहोश हो गया, दूसरा बेटा सुनते ही दाह संस्कार के सामान में जुट गया, तीसरा बेटा सभी रिश्तेदारों को शोक संदेश देने में लग गया, बड़ा बेटा सुनते ही दुकान पर खड़े ग्राहकों को शीघ्र निपटा कर दुकान बढ़ाने का प्रयास करने लगा। यहाँ सभी को पिता का वियोग हुआ परन्तु विवेक एवं कर्त्तव्य पालन अनुसार उसका वेदन चारों को अलग-अलग हुआ।

वैज्ञानिक दृष्टि से वेदन के काल में विशेष रस शरीर में बनता है। चिकित्सा विज्ञानी उसी प्रकार का रस यदि इंजेक्शन से दे दें जैसे बैक्सीन या बनने वाले रस को निष्क्रिय कर दें तो वेदन नहीं होगा। जैसे आपरेशन के पहले डॉक्टर उस स्थान को निष्क्रिय कर देते हैं, जिससे पीड़ा तो होती है पर उसका वेदन करने वाले तंतुओं को निष्क्रिय कर देने से पीड़ा का आभास नहीं होता। यही प्रक्रिया साधक अपनी साधना से रसायन को नष्ट करके अंग की संवेदन शीलता से स्वयं को अलग कर सकता है, यथा क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी का डॉक्टर द्वारा फोड़े का आपरेशन। हॉकी मैच में खेलने वाला चोटी का खिलाड़ी जिसे रक्त बहने एवं चोट लगने का अहसास नहीं होता।

साधना द्वारा रसायन परिवर्तन होना ही नहीं जीन्स परिवर्तन भी संभव है। महावीरस्वामी पर जहरीले सर्प का प्रभाव नहीं होना, मीरा पर विष पीने का प्रभाव नहीं होना, अमरचंद जी दीवान द्वारा शेर को जलेबी दूध खिलाना, यशोधर मुनिराज के सामने उत्तेजित कुत्तों का शांत होना, भगवान के समवशरण में विजातीय पशुओं में मैत्रीभाव होना सभी साधना एवं पुण्य वर्गणाओं का सुफल है।

पुद्गल कर्म का रासायनिक प्रभाव चेतना पर पड़ता है। कर्मसिद्धान्त इसका विवेचन करता है, पर जीव इससे पराधीन नहीं होता है। यदि वह सम्यक् पुरुषार्थ करे तो वह कर्म के प्रभाव को बदल सकता है। बनने वाले रसायन को निष्क्रिय या नष्ट कर सकता है। जब श्रावक साधना में, सत्संग में, पूजा में संलग्न होता है तब कई असाताकर्म फल दिये बिना ही उदीरणा को प्राप्त हो निर्जरित हो जाते हैं। यह सब मन, वचन एवं काय की एकाग्रता पर निर्भर होता है।

काल का प्रभाव जीवनशैली को बदलता है। प्रातः की बेला में उठने वाला व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ रहकर अपने उपयोग को भगवान की भक्ति में लगाता है, जिससे उसमें आत्मशक्ति का विकास होने से असाता की निर्जरा होती है। इसके विपरीत प्रकृति विरुद्ध आचरण करने वाला रात्रि में अधिक जागने से शारीरिक एवं मानसिक रूप से अस्वस्थ रहेगा। पाचनतंत्र में बिगड़ाव, निद्रा, आलस्य एवं प्रमाद से वह कभी बच नहीं सकता।

वाद-विवाद की स्थिति देखकर काल को टालने से कई कार्य बिगड़ने से बच जाते हैं। जिस प्रकार ट्रेन या बस को पकड़ने के लिये हम समय से पूर्व निर्धारित स्थान पर पहुँचकर निश्चिंत हो जाते हैं, उसी प्रकार धार्मिक अनुष्ठान को भी समयानुसार सम्पादित करना चाहिए।

भगवान की दिव्यध्वनि का काल चारों संधि काल है अतः आचार्यों ने स्वाध्याय का निषेध करके सामायिक का काल निश्चित किया है, जिससे हमारे मन शुद्धि का कार्य सहजता से करके सम्पन्न हो सकें। भावों से ही नरक होता है, भावों से ही स्वर्ग होता है, भावों से ही संसार है, उसी से सिद्धत्व है। भावों से संकल्प शक्ति बढ़ती है तथा भोग आकांक्षा की प्रवृत्ति घटती है। बाह्य तप संकल्पशक्ति से ही सम्पन्न होते हैं, उनसे हमारी शारीरिक, मानसिक शक्ति का विकास होता है। समता एवं धैर्य बढ़ता है, परोपकार, जीवदया, संवेदना, करुणा के शुभ भावों से अशुभ की निवृत्ति होती है, शरीर के प्रति ममता भाव टूटता है, भेदविज्ञान का प्रादुर्भाव होता है, शक्ति जागरण से सौर ऊर्जा ग्रहण करने की क्षमता बढ़ जाती है। तप से अंतराय कर्म के परमाणु नष्ट हो जाते हैं, जिससे शरीर में सौर ऊर्जा के संचय करने की क्षमता बढ़ जाती है। अल्पाहार या आहार के अभाव होने पर भी शरीर दुर्बल या क्षीण नहीं होता, हमारे केवलज्ञानी कभी भी कवलाहार नहीं करते, उन्होंने आहार का त्याग नहीं किया बल्कि उन्हें आहार लेने की आवश्यकता ही नहीं रही। ऐसे साधु संत भी होते हैं जो महीनों आहार नहीं करते उन्हें वातरशना कहा जाता है।

विकृत भाव आते ही विकृत रसायन बनता है। कामोद्दीपन, आसक्ति, मोह, सभी विकृत भाव का दुष्परिणाम हैं। मिथ्यात्व के उदय में धर्म चर्चा नहीं सुहाती। मिथ्यात्व के अभाव में विषय भोग नहीं सुहाते। भाव नहीं, विकृत भावों से शरीर से दुर्गंध आती है। लूटपाट, चोरी करने वाले की गंध से कुत्ता उसको पकड़ लेता है। सात्विक प्रवृत्ति वाले की सुगंध उसके आकर्षण को बढ़ाती है। तीर्थंकर भगवान का शरीर चंदन के समान महकता है। मलमूत्र एवं पसीने का अभाव रहता है।

इस प्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव में परिवर्तन करके मानव अपनी असाता को दूर करने में सक्षम है। अशुभ गृह दशा से परिवार, व्यापार पद प्रतिष्ठा पर प्रभाव न हो इसीलिए भक्ति करना उचित है परन्तु वीतरागी

की शरण पाकर सरागी की ओर जाना घोर मिथ्यात्व है, हमारी आत्मिक दुर्बलता का संकेत है। भौतिक संसाधन एवं ऐश्वर्य तो क्षणभंगुर हैं। काल का प्रभाव क्षण मात्र में उसे नष्ट कर सकता है। सुनामी लहरें, भुज का भूकंप किस-किस से क्या-क्या ले गया कोई नहीं जानता। हमारा धार्मिक सिद्धान्त विश्वास एवं सम्यक् अनुष्ठान क्रिया हमारी अपनी है इसे कोई नहीं छीन सकता। आत्मविश्वास से बड़ा कोई विश्वास नहीं होता।

धार्मिक अनुष्ठान करने वाले साधक द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव को सुनियोजित करके सम्यक् पुरुषार्थ से अपने भाग्य को बदल सकता है। कल का पुरुषार्थ आज का भाग्य है। आज का पुरुषार्थ कल का भाग्य है। साधक हाथ की लकीरों का गुलाम नहीं होता वह अपने पुरुषार्थ से हाथ की लकीरों को बदलता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

जैनागम संस्कार - मुनिश्री आर्जवसागर
जम्बूद्वीपपण्णत्ती - आचार्य पद्मनंदी
जैनेन्द्रसिद्धान्तकोश - जिनेन्द्र वर्णी
ज्योतिष रत्नाकर - राजवैद्य बारेलाल जैन
त्रिलोकसार - आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती
देवशिल्प - आचार्य देवनंदी
प्रतिष्ठापाठ - आचार्य जयसेन
प्रतिष्ठारत्नाकर - पं. गुलाबचंद पुष्प
प्रतिष्ठा सारोद्धार - पं. आशाधर जी
प्रतिष्ठाकल्प - आचार्य अकलंक देव
मुहूर्तचक्रावली - दुर्गाप्रसाद द्विवेदी
मुहूर्त चिंतामणि - देवज्ञराम नवलकिशोर
वृहत् संहिता - वराहमिहिर
वास्तुविज्ञान परिचय - आर्यिका विशुद्धमति
सर्वोपयोगीश्लोकसंग्रह - संकलन आचार्य अजितसागर
हरिवंशपुराण - आचार्य जिनसेन
जैनेन्द्रकथाकोश - वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
क्षीरार्णव - श्री विश्वकर्मा
जैनव्रत विधान संग्रह - पं. बारेलाल जैन
ज्योतिष तत्त्व सुधार्णव - श्यामसुन्दर लाल शर्मा
तत्त्वार्थसूत्र - आचार्य उमास्वामी
तिलोयपण्णत्ती - आचार्य यतिवृषभाचार्य
देवज्ञ कल्पद्रुम - पं. गंगाराम जी
प्रतिष्ठाप्रदीप - पं. नाथूलाल जैन
प्रासादमंडन - सूत्रधार मंडन
प्रतिष्ठा तिलक - नेमीचंद देव
प्रतिष्ठासारसंग्रह - ब्र. शीतल प्रसाद जी
मुहूर्त गणपती - देवज्ञवर्यगणपति
व्रत तिथी निर्णय - डॉ. नेमीचंद ज्योतिषाचार्य
वृहत् पारासरहोरा - पारासर मणि
षट्खण्डागम - आचार्य पुष्पदंत भूतबलि
सर्वार्थसिद्धि - आचार्य पूज्यपाद
क्रियाकोश - कवि किशनसिंह
जैन व्रत विधि - श्रीमति निर्मला जैन

पुष्प भवन, टीकमगढ़ (म.प्र.)

मानव तेरे अंतरंग में, करूणा का भण्डार भरा। दानव बनकर हिंसा मतकर, यह अन्दर से सोच जरा॥
रक्षक से भक्षक बन जाता, यह मानव का काम नहीं। धर्म कहे यह हिंसा करके, सुख का मिलता नाम नहीं॥
देखो! भारत भू पर कितना, भारी संकट आया है। गौ-हिंसा अरु पशु-हिंसा ने, क्या साम्राज्य जमाया है॥
चर्म, माँस के लालच में लाखों प्राणी मारे जाते। शरीरादि की शोभा करने, धर्म-सूत्र टाले जाते॥

''नेक जीवन से साभार''

मेरा सूरज मेरा चंदा

शिखरचंद जैन पथरिया

मेरा सूरज मेरा चंदा
मेरा दीपक आँख का तारा
मेरे घर जन्म को लेकर
मेरा नाम तूने चमकाया

1. जन्म लिया था जब मेरे घर में
सूनी माँ की गोद भरी थी
खुशियाँ छाई थीं घर में
मेरे दिल की कली खिली थी
सीने से तुझे लगाया
तुझमें ही मन बहलाया
मेरे घर में जन्म को लेकर
तुमने मेरा नाम चमकाया ।। मेरा सूरज ।।

2. गद्दी मखमली बिछाकर
पलने में तुम्हें झुलाया
माँ ने लोरी गा गाकर
निंदिया में तुम्हें सुलाया
भैया का रोना मचलना
मेरे मन को काफी भाया
मेरे घर में जन्म को लेकर
तुमने मेरा नाम बढ़ाया ।। मेरा सूरज ।।

3. तुम मेरी उँगली पकड़कर
बचपन में चलना सीखे
मैने उम्मीद ये की थी
तुम होंगे मेरे सहारे
पर तुमने घर को छोड़ा
अपनों से नाता तोड़ा
मेरे घर जन्म को लेकर
मेरा नाम तुमने चमकाया ।। मेरा सूरज ।।

5. मेरे घर यदि तुम रहते
सिर्फ दीपक बनकर जलते
बड़ा नाम हो गया मेरा
जब तुम सूरज-से चमके
मुनि बनकर तुमने जग को
मुक्ति का मार्ग दिखाया
मेरे घर में जन्म को लेकर
मेरा नाम तुमने चमकाया ।। मेरा सूरज।।

रो-रोकर यह कहते पशु हे-मानव! मुझको मत मारो। सुनो-सुनो! आवाज हमारी, थोड़ी सी-करुणा धारो॥
हम सब चेतन धारी प्राणी, सब मिल जग में रहते हैं। सब सुख के हैं इच्छुक प्राणी, यह धर्मी जन कहते हैं॥
धर्म जैन हो या हिन्दू हो, चाहे हो सिख ईसाई। मुस्लिम बौद्ध सभी में देखो! नहीं कही हिंसा भाई॥
सभी धर्म जो दया मूल है, उसकी बात बताते हैं। नही मारना किसी जीव को, यही सबक सिखलाते हैं॥
मद्य माँस वा मधु सेवन में, नहीं अहिंसा पलती है। मन-वच-तन में विकृति आती, वृत्ति तामसिक बनती है॥
नहीं धर्म में मन लगता है इनका सेवन जो करता। क्रूर भाव से धर्म भूलकर, दुर्गति पीड़ा वह सहता॥
''नेक जीवन से साभार''

पाठक पत्र

धूमधाम से मनाई महावीर जयंती

टीकमगढ़ ! भगवान महावीर स्वामी की जयंती यहाँ बड़े धूमधाम से मनाई गई। इस अवसर पर संत शिरोमणी आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य परम पूज्य मुनि श्री १०८ आजर्वसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री १०५ अर्पणसागर जी महाराज के सानिध्य में मांझ के जैन मंदिर में एक विशाल शोभायात्रा नगर के मुख्य मार्गों पपौरा चौराहा, कोतवाली होते हुए पुन: मंदिर पहुँची। शोभायात्रा में धार्मिक गीत जैन बैंड पर गूँज रहे थे तथा रथ पर श्री जी की झाँकी भी सुशोभित थी। सभी ने अपने घरों के सामने रंगोली सजाई तथा श्री जी, मुनि महाराज जी की आरती उतारी एवं शोभायात्रा का स्वागत किया। शोभायात्रा के समापन में भारी संख्या में महिलाएँ पुरुष मौजूद थे। इस अवसर पर परम पूज्य मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में वर्ष 2000, 2004 एवं 2006 में सम्पन्न हुई विद्वत संगोष्ठियों की स्मारिका ''संगोष्ठीत्रय स्मारिका'', महाराज जी द्वारा रचित कृति ''जैनागम संस्कार'' एवं महाराज जी की प्रेरणा और आशीर्वाद से आरम्भ की गई त्रैमासिक पत्रिका ''भाव विज्ञान'' के तीसरे अंक का विमोचन जिला न्यायधीश श्री ए.के. जैन द्वारा किया गया।

(अजित जैन)

संगोष्ठीत्रय स्मारिका : एक ज्ञानकोष

''सन्त शिरोमणि प.पू. १०८ आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज नागराज हिमालय की भाँति जैन जगत में शोभायमान हैं। उनके करुणा रूप हिम शिखर से जो अध्यात्म रूप अमृत प्रवाहित हुआ उसे अतृप्त रुचि के साथ पान करने वाले प.पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज का व्यक्तित्व अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी है। उन्होंने स्वकल्याण के साथ समाज को सुखशान्ति का ज्ञानमय मंत्र दिया है। उनके द्वारा धर्म प्रभावना के गहनीय कार्य सम्पादित किए जा रहे हैं। मुझे उनकी असीम कृपा से आगम के विविध गूढ़ तत्वों को उजागर करने वाली उनके चरण सानिध्य व दिशा बोध प्रदायक प्रेरणायुक्त विद्वत संगोष्ठियों में सम्मिलित होने का अवसर अनेकश: मिला है। पोन्नूरमलै का आचार्य कुन्द कुन्द का अध्यात्मक विषयक सारस्वत सम्मिलन, सन् 2004 में भोपाल में सम्भूत षोडशकारण भावना केन्द्रित संगोष्ठी तथा राँची में ज्योतिष्क विमानों का काल-परिवर्तन हेतु प्रभाव को केन्द्रित कर सम्पन्न सेमिनार उनकी ज्ञान प्रभावना के उदाहरण हैं। विद्वानों के प्रति उनका वात्सल्य ज्ञान प्रसार में अग्रसर करने वाला है। वे प्रवचन पटुता के प्रतीक तो हैं ही, साथ ही अपेक्षित विषयों पर लेखनी के धनी भी हैं। शिक्षण शिविरों एवं पाठशालाओं के लिए उपयोगी उनकी कृति जैन आगम संस्कार वस्तुत: जैनधर्म के दर्शन ज्ञान-चारित्र आयामों को संस्कारित करने वाली बहुमूल्य कृति है और हृदय में धारणीय भी है। अन्य लेखन भी व शिविरों-संगोष्ठियों में दिये गये प्रवचन एवं विद्वानों के आलेखों की विस्तृत समीक्षाएँ अध्येय हैं। उनके प्रति श्रद्धा से माथा झुके बिना नहीं रहता है।

तीन संगोष्ठियों (राँची, भोपाल, पोन्नूरमलै) की स्मारिका मेरी दृष्टि के समक्ष है। श्रेष्ठ गेटअप कागज, सम्पादन, सामग्री आदि सभी दृष्टियों से प्रशंसनीय है। भगवान महावीर आचरण संस्था समिति द्वारा डॉ. सुधीर जैन एवं श्री अजित जैन के संयुक्त सम्पादन में प्रकाशित

की गई है। विद्वज्जगत एवं श्रावकों हेतु ज्ञानकोष ही है।

अभी प.पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी की पावन प्रेरणा से ही श्रीमती सुषमा जैन के प्रकाशकत्व में मेरे पूर्व स्नेही भाई श्रीपाल जैन दिवा के द्वारा सम्पादित त्रैमासिक ''भाव विज्ञान'' पत्रिका पढ़ने का अवसर मिला। सम्पादक मंडल में डॉ. सी. देव कुमार, ब्र. जय निशान्त एवं अजित कुमार जैन का योगदान है तृतीय अंक में (प्रथम वर्ष) पारस को पार्श्व रुप बनने का व पू. पिता श्री शिखरचन्द जी का जीवन वृतान्त व उनके वियोग का वृत्त ज्ञात हुआ। बड़ा प्रेरणाप्रद है। वैसे तो पारस, पथरियाओं के मध्य ही रहता है और उसका प्रभाव नहीं होता है, किन्तु जब वही पथरिया वर्ग से पृथक होकर कार्यक्षेत्र में आता है तो लोहे को स्वर्ण बनाने में जुट जाता है। इसी प्रकार पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज समाज को स्वर्णिमता प्रदान कर रहे हैं। उनके चरणों में कोटिशः नमन। संगोष्ठियों के आयोजकों, प्रकाशकों, सम्पादकों व प्रबंधकों को भूरि-भूरि बधाई।

(शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी)

भाव विज्ञान : एक वैज्ञानिक चिंतन पत्रिका

बुन्देलखण्ड ने सारस्वत मनीषी ही नहीं शाश्वत-संतों को भी सिरजा है। आचार्य संत शिरोमणी श्री विद्यासागर जी के अग्रिम पंक्ति के संत शिष्यों में परम पूज्य मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज, एक बहुभाषी आगम के प्रखर चिन्तक व प्रतिपादक दिगम्बर संत है। ''भाव विज्ञान'', जैन पत्रिकाओं के समुदाय में अपने सन्दर्भित वैज्ञानिक और आध्यात्मिक सुरुचिपूर्ण आलेखों से विशिष्ट पहिचान बनायेगी और मुनिवर श्री के वैज्ञानिक चिन्तन को इसके माध्यम से प्रकाशित कर ज्ञानालोक में एक और प्रकाश स्तम्भ निर्मित होगा। तृतीय मार्च 08 अंक के साथ सुधी सम्पादक मण्डल को मेरी बधाई।

(प्राचार्य पं. निहालचंद जैन)

Dear Prof. L.C. Jain,

Thank you very much for sending me 2nd and 3rd issues of Bhav Vijnan (2008). I am indeed very happy for the second issue since it contains the list of your publications and their importance in the field of History of Mathematics.

Hope you are keeping well.

With kind regards,

(A K Bag, Editor, IJHS)

**तन भावों की हिंसा से वह, पाप कर्म का अर्जन हो।
हिंसा त्यागें करुणा धारें, पाप कर्म का मर्दन हो॥
पाप कर्म से दूर हुआ जो, उसका मन सुख पाता है।
भावों की वह शुचितापूर्वक, जैन धर्म अपनाता है॥**

**पाप बढ़े तब राष्ट्र ग्राम में, अशुभ कर्म होते दिखते।
महामारी व भूकम्पों से, लाखों जन पीड़ित दिखते॥
मानव सोचे इन दुःखों को, कौन यहाँ आ देता है?
स्वयं पाप की बलिहारी को, क्यों न समझ वह लेता है ?**

**नहीं प्राण की चिंता जिनको, आत्म धर्म की चिन्ता है।
नहीं लेते जो अभक्ष वस्तु, जहाँ जीव की हिंसा है॥
शाकाहारी भोजन में भी, जो सीमा को रखते हैं।
नहीं दास, बनते जिह्वा के, साधु लालसा तजते हैं॥**

''नेक जीवन से साभार''

समाचार

नमोस्तु शासन की अभूतपूर्व प्रभावना

दिनांक 14.1.2006 का शुभ दिन सकल दिगम्बर जैन समाज के लिये मंगलमय के साथ पुण्य संदेश लेकर आया जब परम पूज्य आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के प्रभावक शिष्य पूज्य मुनि श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज के मंगल सान्निध्य में श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र डेरापहाड़ी पर दिनांक 16.2.2006 से 23.2.2006 आयोजित पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठा एवं गजरथ समारोह में पात्रों के चयन की बोलियाँ एवं भूमि पूजन समारोह अभूतपूर्व प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ था।

समाज की प्रबल भावना जाग्रत हुई कि मानस्तम्भ वेदी शुद्धि एवं कलशारोहण समारोह एवं पंचकल्याणक की द्वितीय वर्षगाँठ समारोह पूज्य मुनि श्री आर्जवसागर जी एवं ऐलक श्री अर्पणसागर जी की मंगलमय उपस्थिती एवं आशीर्वाद से सम्पन्न हो एतदर्थ समाज का प्रतिनिधी मंडल मुनि श्री से छतरपुर मंगलपदार्पण हेतु दमोह में उनके श्री चरणों में श्री फल समर्पित करके समाज की भावना से अवगत कराया यह समाज का तीव्र पुण्योदय का परिपाक था कि मुनि श्री ने अपनी स्वीकृति प्रदान करके समाज के भव्य जनों को कृतार्थ एवं उपकृत किया।

दिनांक 22.2.2008 से 24.2.2008 तक महाराज श्री की पावन पवित्र पुनीत उपस्थिती के बीच त्रिदिवसीय मानस्तम्भ वेदी शुद्धि स्थापना एवं कलशारोहण समारोह यागमंडल विधान बड़ी भक्ति एवं प्रभावनापूर्ण ढंग से उत्साह, उमंग के साथ प्रतिष्ठित श्री जिन बिम्बों को नूतन धवल संगमरमर से निर्मित भव्य मानस्तंभ पर स्थापित करके एवं मानस्तम्भ सहित मंदिर जी में स्वर्ण कलशारोहण जो पंचकल्याणक के कार्यक्रमों का एक अंश था पूर्ण करके समाज के वृद्ध बाल स्त्री पुरुषों के चेहरों पर खुशी के चिन्ह परिलक्षित हो रहे थे। माननीय श्री कपूरचंद जी (घवारा) अध्यक्ष म.प्र. हस्त शिल्प एवं हाथकरघा निगम मर्या., भोपाल (केबिनेट मंत्री) भोपाल की गरिमामयी उपस्थिती रही।

सकल दिगम्बर जैन समाज का तीव्र पुण्योदय अभी क्षय नहीं हुआ था इसलिए महाराज जी के श्री चरणों में वाचना का प्रस्ताव रखा एवं महाराज श्री के द्वारा रचित तीर्थोदय काव्य की वाचना क्षेत्र पर प्रारंभ हुई एवं प्रतिदिन ''ध्यान'' पर प्रवचन हुए । इसी बीच दिनांक 14.3.08 से 21.3.08 तक अष्टान्हिका पर्व पर नंदीश्वर दीप महामण्डल विधान आयोजित किया गया, जो अनेक सफलताओं एवं उपलब्धियों की सौगात जैन समाज को दे गया, समाज के बच्चों में, महिलाओं पुरुषों में एक धर्ममय जाग्रति का वातावरण महाराज श्री के प्रवास के दौरान सहज में देखा जा सकता था, म.प्र. के प्रमुख समाचार पत्रों में महाराज श्री की फोटो के साथ, सारगर्भित, मार्मिक, हृदयग्राही जिनागम की देशना नियमित प्रकाशित होती रही, जिससे जैन-जैनेतर समाज में अपूर्व धर्म प्रभावना हुई, महाराज श्री के व्यक्तित्व एवं कर्तत्व के बारे में लिखना मानो सूरज को दीपक दिखाना है। महातपस्वी, महादानी, महाध्यानी मुख कमल पर धीमी मुस्कान, शांत, सौम्यमुद्रा, सरल हृदय, ख्याति लाभ से अत्यंत दूर चौथे काल के मुनि सदृश कठोरचर्या के धनी इस अनिष्ट कलि काल में बिरले ही मुनि होते हैं । यह डेरापहाड़ी के अतिशय के साथ ही मुनि श्री का भी अतिशय था, जो श्रावकों के मानस में दान की महिमा पैदा हुई एवं उक्त सभी समारोहों में श्रावकों ने कल्पना से अधिक विपुल दान राशि बड़ी उदारमना भावना से प्रदान की है।

पूज्य मुनि श्री के द्वारा रचित जैनागम संस्कार (प्रश्नोत्तर मालिका) जो शिक्षण शिविर एवं पाठशालाओं के लिए बहु उपयोगी कृति है, द्वितीय संस्करण की 1000 प्रतियाँ प्रवास के स्मृति स्वरूप में प्रकाशन कराने के शुभभाव सकल दिगम्बर जैन समाज, छतरपुर के जाग्रत हुए हैं ताकि समाज के प्रौढ़, नवयुवक, नवयुवतियाँ, बालक-बालिकाएँ महाराज श्री के द्वारा जिन-आगम की खोजपूर्ण गहन जानकारी एक ही ग्रन्थ में एक ही जगह उपलब्ध करा सकें और जिससे अपूर्व धर्म-लाभ ले सकें, एतदर्थ सकल समाज मुनि श्री का जन्मों-जन्मों तक ऋणी रहेगा एवं इस उपकार का कभी भी विस्मरण नहीं कर सकेगा। इन्हीं भावनाओं के साथ समाज के प्रत्येक भव्य जीव की ओर से मुनि श्री के श्रीचरणों में त्रि बार नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु।

पदमचंद बाँसल
अध्यक्ष
श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र डेरापहाड़ी (छतरपुर)

कोमलचंद औलिया
अध्यक्ष
सकल दिगम्बर जैन समाज, छतरपुर

कुवैत की यादगार महावीर जयंती

मैं कुवैत में लगभग पिछले एक वर्ष से हूँ। यह एक मुस्लिम देश है। इस बार सन् 2008 की महावीर जयन्ती यहीं पर मनाने का अवसर प्राप्त हुआ। यहाँ पर महावीर जयन्ती जिस हर्षोउल्लास के साथ मनाई गई वह मेरे लिए एक यादगार बनकर रह गई। इस प्रकार की महावीर जयन्ती तो मैंने भारत के अनेक उन स्थानों पर भी नहीं देखी जहाँ जैनों की जनसंख्या बहुत है यहाँ मात्र सौ-सबा सौ परिवारों ने मिलकर उत्साह के साथ जो कार्यक्रम आयोजित किए वह अद्‌भुत थे। मैं इन कार्यक्रमों को देखकर भावुक हो गया कि देखो अपने वतन के दूर बैठे ये जैन किस प्रकार अपने संस्कारों को सँजोये हुये हैं। यहाँ जितने भी कार्यक्रम आयोजित किए गए उनका उद्देश्य भगवान महावीर को याद करना तो था ही साथ ही यह भावना भी थी कि हम अपने बच्चों में उन जैन संस्कारों को किस प्रकार बाँटे जो भगवान् महावीर की परम्परा में चले आ रहे हैं।

यहाँ जैनों की एक संस्था है जिसका नाम है "अरिहन्त सोश्यल ग्रुप"। इस संस्था में लगभग 95 परिवार सदस्य हैं। इस संस्था के अंतर्गत "जैन पाठशाला" भी चलती है जिसमें लगभग 25 बच्चे नियमित जैन धर्म का अध्ययन करने जाते हैं। यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि पूरा कुवैत काफी विस्तार में फैला हुआ है। कुछ बच्चे तो 15 से 20 कि.मी. दूर तक से आते हैं। यह पाठशाला सप्ताह में दो दिन चलती है। इस पाठशाला में दो बहिनें पढ़ाती हैं जिनका नाम है - श्रीमती पुष्पा बेन पारिख तथा श्रीमती प्रियंका जैन। भारत की जैन समाज को इससे सबक लेना चाहिए कि हम भी स्थान-स्थान पर इस प्रकार की पाठशालाएँ स्थापित करें।

यह भी विशेष उल्लेखनीय है कि इस संस्था से जुड़े लोगों में श्वेताम्बर मूर्तिपूजक, स्थानकवासी, दिगम्बर तथा तेरापंथी सभी है। सब लोग मिलजुलकर ये कार्य करते हैं।

महावीर जयन्ती कार्यक्रम में सर्वप्रथम एक क्विज के माध्यम से भगवान महावीर का पूरा परिचय दिया गया। तत् पश्चात भगवान् पार्श्वनाथ मैनामुन्दरी तथा सेठ सुदर्शन पर नाटक प्रस्तुत किये गये। अनेक बच्चों ने भजन व समूह नृत्य प्रस्तुत किए। इन सब कार्यक्रमों में लगभग 50 बड़े तथा बच्चों ने हिस्सा लिया।

यहाँ एक बात और याद आ रही है असम के नगर शिवसागर, की जहाँ पर जैनों के मात्र 20 से 25

परिवार ही होंगे। वहाँ एक गृह चैत्यालय है जो कि भागचन्द्र जी वाकलीवाल सहाब के घर में है। श्री भागचन्द जी बहुत ही धर्मप्रिय व्यक्ति हैं। इनका सभी जैनों के प्रति आदर भाव तथा वात्सल्य प्रेम बहुत ही अद्भुत है। इनके प्रयासों से प्रतिवर्ष महावीर जयन्ती के दिन एक जुलूस निकाला जाता है जिसमें जैन ही नहीं बल्कि राजस्थान के अनेक अजैन भी हिस्सा लेते हैं। मुझे याद है सन् 2005 की शिवसागर की महावीर जयन्ती। वहाँ पर भी इतने कम जैन परिवारों के बाबजूद अनेक धार्मिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। यह सब लिखने का उद्देश्य मात्र यह है कि यदि हमारी इच्छा शक्ति प्रबल है तब हम कम संख्या में होने के बाबजूद भी अच्छे से अच्छे कार्यक्रम कर सकते हैं। सबों को जोड़कर काम करना एक बात है तथा गुटबाजी पंथ बाजी सम्प्रदाय बाजी करके अपनी नेतागिरी करना अलग बात है। हमारे धर्म गुरुओं को भी इन बातों पर ध्यान देना चाहिए।

मैं कुवैत के कार्यक्रमों की चर्चा कर रहा था। महावीर जयन्ती के पावन अवसर पर उन बच्चों को भी प्रोत्साहन के लिए पुरस्कृत किया गया जिन्होंने हाईस्कूल तथा इण्टरमीडिएट परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त किए। कार्यक्रम के अन्त में भोजन का आयोजन किया गया।

मैं एक बात और बताना चाहता हूँ कि यहाँ प्रतिवर्ष पर्यूषण कार्यक्रम भी बहुत उत्साह के साथ श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों के हिसाब से अठारह दिनों तक मनाया जाता है। यहाँ प्रयास रहता है कि किसी अच्छे वक्ता को बुलाया जाय जो बच्चे-बड़े सबों में जैन संस्कारों की ज्योति को बनाये रखने में मददगार हो।

डॉ. अनिल कुमार जैन

मैं धर्म मार्ग पर चलते हुए देश की सेवा करता रहूंगा : एस.के. जैन

जैन स्वर्ण मंदिर ग्वालियर में मुनि श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में श्रीमान एस.के. जैन साहब, मुंबई आणुविक ऊर्जा वैज्ञानिक का सम्मान किया गया, श्री एस.के. जैन साहब ग्वालियर, डीडवाना ओली के निवासी हैं एवं आप जैन स्वर्ण मंदिर कमेटी के सदस्य भी है।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्वालियर में हुई एवं उच्च शिक्षा ग्वालियर के प्रतिष्ठित MITS से इंजीनियर की शिक्षा प्राप्त की है, तत्पश्चात आणुविक ऊर्जा के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर रहते हुए वर्तमान में आप न्यूक्लीयर पावर कारपोरेशन ऑफ इन्डिया में चेयरमैन एवं मैनेजिंग डायरेक्टर के पद पर सुशोभित हैं।

आपके निरंतर अनुसंधान एवं विशेषज्ञता के कारण आप आणुविक ऊर्जा के क्षेत्रमें सर्वोच्च पद पर आसीन हैं। इस सुअवसर पर मुनिश्री ने अपने आशीर्वन में श्री जैन को धर्म के अनुरूप चलने एवं आत्मोन्नति के लिए आशीर्वाद स्वरूप धर्मशास्त्र दिए। उपरोक्त अवसर पर श्री एस.के. जैन साहब ने अपने उद्बोधन में कहा एवं मुनिश्री को विश्वास दिलाया कि मै अपने धर्ममार्ग पर चलते हुए देश की सेवा करता रहूंगा।

आपके सम्मान में जैन स्वर्ण मंदिर प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष, अनिल शाह, सचिव संजय भौंच, राजेश बाकलीवाल, अजय भौंच, निर्मल सोनी, निर्मल पाटनी, राजकुमार सेठी, नरेन्द्र पाटनी, अनूप सोगामी, यतीन्द्र बड़जात्या, अंकित पाटनी एवं उनके परिवारजन तथा समस्त जैन समाज अपने आपको गौरवान्वित महसूस कर रहा है।

सम्मेद शिखर जी की यात्रा से लौटने पर शीलरानी नायक का सम्मान

वर्णी भवन मोराजी ट्रस्ट कमेटी तथा गणेश दिगंबर जैन संस्कृत महाविद्यालय, सागर के मंत्री क्रांति कुमार सराफ के सौजन्य से श्रीमती शीलरानी नायक पनागर वालों के तत्वाधान में अनेक विद्वतजनों व विद्यालय के छात्रों ने शाश्वत तीर्थराज सम्मेद शिखर जी की 23 से 29 जनवरी तक यात्रा तीर्थ वंदना एवं परिक्रमा सम्पन्न की। तीर्थ यात्रा से वापस आने पर उनका वर्णी बाल संस्कार केन्द्र, महाविद्यालय के छात्र, शिक्षक व शिक्षिकाओं के बीच श्रीमती शीलरानी नायक का संस्था की ओर से डॉ. जीवन लाल जैन एवं उनकी पत्नी श्रीमती मनोरमा जी ने सम्मान किया। संस्था के मंत्री-डॉ. कांति कुमार सराफ ने विद्यालय के छात्रों को पुत्रवत स्नेह प्रदान करते हुये स्वयं प्रभु की भक्ति मानकर यात्रा सफल कराई जो संस्था के इतिहास में एक अद्वितीय मिशाल बन गई।

इस यात्रा में श्रीमती शीलरानी नायक के साथ श्रीमती पुष्पा जैन दुर्ग, श्रीमती बिमला बाई सिंघई शहपुरा, भटौनी तथा इनके अन्य परिजन तथा वर्णीभवन के कर्मचारी भी साथ गये थे। सभी ने सम्मेद शिवर जी की वन्दना के उपरान्त अगले दिन सम्मेद शिखर पर्वत की परिक्रमा कर पुण्य लाभ कमाया। कार्यक्रम में अपने संस्मरण सुनाते हुये श्रीमती शीलरानी ने कहा कि पचासी सदस्यीय इस संघ में अधिकतर बच्चे सम्मिलित थे। जिनकी निर्विघ्न यात्रा सम्पन्न हुई। यात्रा की इस व्यवस्था में उन्होंने संस्था के मंत्री डॉ. कांतिकुमार सराफ की सराहना की। इस अवसर पर श्रीमती शीलरानी ने मस्त विद्यार्थियों व सहयात्रियों को सम्मेद शिखर तीर्थ का चित्र, टोंको की अर्धावली एवं तीर्थराज की रज की डिब्बी भेंट की। इस अद्वितीय कार्य को सम्पन्न कराने में डॉ. जीवनलाल जैन, सिंघई अजय कुमार व अन्य विद्वतजनों ने डॉ. कांति कुमार सराफ का सम्मान किया।

यात्रा गये 23.1.2008, लौटे 30.1.2008

श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय के स्टॉफ एवं विद्यार्थियों की श्री सम्मेद शिखर जी यात्रा पर जाने की सूची....

यात्रा कराने वाली श्रीमती शीलरानी नायक ''पनागर''

1) सत्यम जैन कुँवरपुर
2) पारस जैन, रमखिरिया
3) अंशुल जैन, बोरिया
4) अंकित जैन, बरौदा
5) सौरभ जैन, भगवा
6) रीतेश जैन, सागर
7) सत्यम जैन, रामगढ़
8) प्रदीप जैन, उदयपुरा
9) पवन जैन, दिनारी
10) निकुंज जैन, खेड़की
11) नितिन जैन, मुहली
12) अनुपम जैन, पटनाबुजुर्ग
13) रूपेश जैन, सागर
14) सौरभ जैन, खैराना
15) आनंद जैन, नयनगढ़
16) प्रत्याश जैन, तेन्दूखेड़ा
17) नीलेश जैन, सागर
18) अभिषेक जैन, सागर
19) अभिषेक जैन, खेजरा
20) मनोज जैन, कुड़ई
21) अनिल जैन बकस्वाही
22) मोनू जैन, केलवांस
23) विकास लुहर्रा
24) अर्पित, केवलारी
25) दीपक जैन, रामटोरिया
26) प्रमोद जैन, जमुनिया
27) अरिहंत जैन, धनौरा
28) आनंद जैन, सागर
29) कृष्ण कुमार जैन, ताजपुर
30) अभिषेक जैन, ताजपुर
31) अभिनंदन जैन, सानौधा
32) रोहित जैन, मोहली
33) दीपक जैन, भुण्डेरी
34) शुभम जैन, रामगढ़
35) संदेश जैन, मझगुआ
36) नीरज जैन, सागर
37) दिनेश जैन, सोनखेड़ा
38) आकाश जैन, तेन्दूखेड़ा
39) अमित जैन, खम्हरिया
40) दीपक जैन, उदयपुरा
41) अमित जैन, पटना (बुजुर्ग)
42) राहूल जैन, जय नगर
43) अनिमेष जैन, कटंगी
44) अर्पित जैन, सोडरपुर
45) नरेन्द्र जैलन, तेन्दूखेड़ा
46) कपित जैन, झापन
47) मनोज जैलन, झापन
48) अरविंद जैन, नेगवा
49) दिनेश जैन, किन्द्रोह
50) अंकित जैन, सोडरपुर
51) सुमेरचंद जैन, मनका
52) सचिन जैन, दमोह
53) मनीष जैन, केवलारी
54) अभिषेक जैन, बण्डा
55) मयंक जैन, केवलारी
56) सौरभ जैन, ललितपुर
57) प्रवीण जैन, मुहवी
58) वीरेन्द्र जैन, बारहा
59) सुरेन्द्र जैन, मुहली
60) रूपेश जैन, बिजाकर
61) जिनेश जैन, मुडेरी
62) राजेश जैन, गोरझामर
63) मोनू जैन, मुहली
64) मनीष जैन, मुहली
65) अजित जैन, मुहली
66) अभिषेक जैन, लुहर्रा
67) पं. श्री ज्ञानचंद जी, लुहर्रा
68) पं. श्री मनोज कुमार जी, लुहर्रा
69) पं. विरेन्द्र कुमार जी, लुहर्रा
70) राजराम दुबे
71) सुन्दरबाई
72) विमला बाई
73) नन्हेलाल
74) घनश्याम
75) डॉ. श्री कांतिकुमार जी सर्राफ
76) श्रीमती सर्राफ
77) श्री छोटे लाल जी जैन
78) श्रीमती शीलरानी जी
79) श्री जितेन्द्र जैन
80) श्री वन्दना जैन
81) मनीष जैन
82) गुड्डी जैन
83) कस्तुरी बाई
84) बिमलाबाई, शहपुरा
85) रजनी जैन, विदिशा

महाराजा छत्रसाल म्युजियम कुवेला जिला छतरपुर की प्राचीन मूर्तियों का अवलोकन करते हुए मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज

महाराजा छत्रसाल म्युजियम कुवेला जिला छतरपुर की प्राचीन मूर्तियों का अवलोकन करते हुए मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज

जैन स्वर्ण मंदिर ग्वालियर में मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में श्रीमान एस.के. जैन, मुंबई आणुविक ऊर्जा वैज्ञानिक का सम्मान किया

(श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय, सागर के स्टाफ एवं विद्यार्थी)
श्रीमती शीलरानी पनागर वालों के तत्वाधान में दि. 23 जनवरी से 30 जनवरी 2008 तक श्री सम्मेद शिखर जी शाश्वत तीर्थराज की वंदना तथा परिक्रमा करने वाले।

महावीर जयंती के अवसर पर टीकमगढ़ में परमपूज्य मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री १०५ अर्पणसागर जी महाराज के सानिध्य में निकाली गई ''अहिंसा रैली'' का विहंगम दृश्य

टीकमगढ़, मांझ जैन मंदिर से महावीर जयंती के अवसर पर परम पूज्य मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री १०५ अर्पणसागर जी के सानिध्य में ''संगोष्ठीत्रय स्मारिका'' एवं ''भाव विज्ञान'' मार्च २००८ का विमोचन करते हुए टीकमगढ़ के सत्र न्यायधीश श्री जैन

परमपूज्य मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित साहित्य को जिला न्यायधीश श्री ए.के. जैन ग्रहण करते हुए - पावन अवसर महावीर जयंती २००८ टीकमगढ़

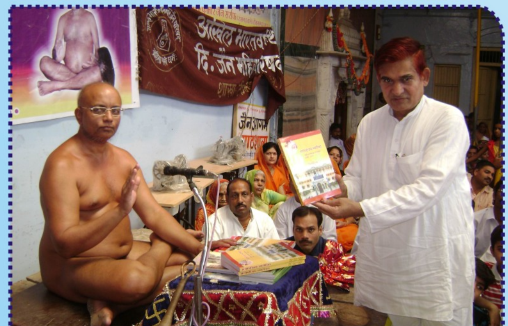

टीकमगढ़ के मांझ मंदिर में महावीर जयंती के अवसर पर परम पूज्य श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में सम्पन्न हुई विद्वत संगोष्ठियाँ का संकलन ''संगोष्ठीत्रय स्मारिका'' एवं ''भाव विज्ञान'' त्रैमासिक पत्रिका के मार्च २००८ अंक का विमोचन करते जिला न्यायधीश श्री ए.के. जैन।

रजि. क्रं. MPHIN21331/12/1/2007-TC

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

कार्यालय : एम-8/4 गीतांजलि काम्प्लेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल फोन : 0755-2776183

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति की नींव सन् 2004 में संतशिरोमणी आचार्य श्री 108विद्यासागर महाराज के परम प्रभावक शिष्य पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर महाराज के आशीर्वाद से हुई। इस समिति के गठन का मुख्य उद्‌देश्य एक ऐसे समूह को तैयार करना है जो कि जैन धर्म के कम से कम मूल नियमों का पालन करता हो (रात्रि भोजन त्याग, देवदर्शन आदि)।

यह संस्था जीव दया व अहिंसा के प्रचार के साथ-साथ पशु रक्षा हेतु गौशाला के संचालन में सहयोग तथा विभिन्न नगरों में पाठशालाओं को अपग्रेड करने के साथ-साथ संचालन में सहयोग करती है। यह संस्था गौशाला तथा पशु रक्षा करने वाली संस्थाओं में समर्पित व्यक्तियों का सम्मान भी करेगी। आप भी इस समिति की सदस्यता ग्रहण कर हमारे उद्‌देश्यों की पूर्ति में सहयोग कर सकते हैं। सदस्यता ग्रहण करने हेतु आपको एक फार्म भरना होगा जिसमें जैन धर्मो के मूल नियमों के पालन हेतु शपथ पत्र पर हस्ताक्षर करने होंगे। यदि आप इस समिति के कानूनन सहयोगी बनना चाहते हैं तो निर्धारित शुल्क जमा कर यथानुसार सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं।

वर्ष 2004 से अब तक समिति को मुनिश्री आर्जव सागर महाराज द्वारा लिखित लगभग 12 पुस्तकों का प्रकाशन, पाठशालाओं के संचालन में सहयोग तथा मुनि संघों के प्रवास/चातुर्मास के दौरान अनेक सेवाएँ देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

अभी हाल ही में भोपाल से **भाव विज्ञान** पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ है इसका चौथा अंक आपके हाथों में है। इस पत्रिका का मुख्य उद्‌देश्य जैन धर्म के अनुसार विज्ञान की प्रगति के बारे में बताना है। हमारे मन में आने वाले धार्मिक भावों को विज्ञान से जोड़ने वाली यह पत्रिका विशेष रूप से नयी पीढ़ी के मन की धार्मिक शंकाओं को दूर करने का प्रयास करेगी। समिति के समस्त सदस्यों को भाव विज्ञान पत्रिका नियमित रूप से निःशुल्क भेजी जावेगी।

सम्पर्क सूत्र :

महामंत्री
अजित जैन
94256 01161

संयुक्त सचिव
अरविन्द जैन

कोषाध्यक्ष
अविनाश जैन

उपाध्यक्ष
राजेन्द्र चौधरी

अध्यक्ष
डॉ सुधीर जैन
9425011357

सदस्य -**पवन जैन, श्रीमती संगीता जैन**

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

संरक्षक

श्रीमती शीलरानी नायक, पनागर
श्री राजेश जैन रज्जन, दमोह
श्री सुनील कुमार जैन, सतना
श्री महावीर प्रसाद जैन, सतना
श्री राजेन्द्र जैन कल्लन, दमोह
श्री अजित जैन, भोपाल

आजीवन सदस्य

श्री मनोज जैन दालमिल, दमोह
श्री महेश जैन दिगम्बर, दमोह

सदस्य

श्रीमती मना जैन, भोपाल
श्री जिनेश जैन, भोपाल
श्री अनेकांत जैन, भोपाल
श्री योगेन्द्र जैन, रांची
श्री शांतिलाल वागडिया, जयपुर
श्री अमित लाल जैन, रांची
श्री संजीव जैन शाकाहारी, दमोह
श्री तरुण सरार्फ, दमोह
श्री पदम लहरी, दमोह

भाव विज्ञान पत्रिका

परम संरक्षक

श्री गौतम काला, राँची
श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, दैहरादून
श्री पदमराज होळ्ळ, दावणगेरे

संरक्षक

श्री विजय अजमेरा, रीवा
श्री के सी जैन, डि. एक्साइज आफीसर, छतरपुर

आजीवन सदस्य

श्री यू.सी. जैन, एलआईसी-दमोह
श्री जिनेन्द्र उस्ताद, दमोह
श्री नरेन्द्र जैन, सबलू दमोह
श्री निर्मल कुमार, इटोरिया
श्री संजय जैन, पथरिया दमोह
श्री अभय कुमार जैन, गुड्डे पथरिया, दमोह
श्री राजेश जैन हिनोती, दमोह
श्री निर्मल जैन इटोरिया, दमोह

श्री चंदूलाल दीपचंद काले, कोपरगाँव
श्री पूनमचंद चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री नितिन मदनलाल कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री चंपालाल दीपचंद ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक पापड़ीवाल, कोपरगाँव
श्री सुभाष भाऊलाल गंगवाल, कोपरगाँव
श्री तेजपाल कस्तूरचंद गंगवाल, कोपरगाँव
श्री सुनील गुलाबचंद कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री श्रीपाल खुशीलचंद पहाड़े, कोपरगाँव
श्री शिखरचंद अशोक कुमार लोहाड़े, कोपरगाँव
श्री प्रेमचंद कुपीवाले, छतरपुर
श्री चतुर्भुज जैन, सब इंजिनियर, छतरपुर
श्री प्रदीप जैन, इनकमटैक्स, छतरपुर
श्री एम.के. जैन, लघु उद्योग निगम, छतरपुर

श्री रतनचंद देवेन्द्र कुमार बस वाले, छतरपुर
श्री कमल कुमार जतारावाले, छतरपुर
श्री मुन्नाचंद जैन, छतरपुर
श्री देवेन्द्र डयोढ़िया, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल, डेरा पहाड़ी, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल शहर, छतरपुर
पंडित श्री नेमीचंद जैन, छतरपुर
डॉ. सुरेश बजाज, छतरपुर

नये सदस्य

श्री विनय कुमार जैन, टीकमगढ़
सिंघई कमलेश कुमार जैन, टीकमगढ़
श्रीमती संगीता बजाज (पत्नी श्री हर्ष बजाज) टी.
श्री संतोष कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री अनुज कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री सुनील कुमार जैन, सीधी

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।

सम्पादक - श्रीपाल जैन 'दिवा' एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)